...egree relatives and 50 second-degree relatives aged 16- probands with severe atrophic gastritis were studied biop- and for the presence of circulating antibodies to parietal and intrinsic factor. The probands were selected from two ...ptically studied samples of a Finnish rural community: one a random sample (Siurala et al) and the other selected on the basis of a low uropepsin excretion at screening examination (Isokoski). The total prevalence of gastritis in the age group 16-30 was higher in the first-degree relatives than in the corresponding...

43603

४३६०३

७०

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या ....   आगत संख्या ....

पुस्तक-वितरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३०वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

random sample (Siurala et al) and the other selected on the basis of a low uropepsin excretion at screening examination (Isokoski). The total prevalence of gastritis in the age group 16-30 was higher in the first-degree relatives than in the corresponding age

ओ३म्

संस्कृतप्रबोधः

चतुर्थो भागः

बदरीदत्त शर्मणा

संस्कृत-भाषा-व्युत्पिपित्सूनाम्
उपकाराय
प्राकृतभाषया विनिर्मितः

The

SANSKRIT PRABODHA

or

A Sanskrit Grammar
PART IV

By

P. Badri Datt Sharma.

B. D. Press Cawnpore

प्रथमावृत्तौ १०००] १९०७ [मूल्यम् ।

मुद्राधि…

विषयानुक्रमः

संस्कृत प्रबोधे ।

चतुर्थो भागः

अथ कृदन्तप्रकरणम् ।

अब कृत् प्रत्ययोंका निरूपण किया जाता है—

तिङ् प्रत्ययों के समान कृत् प्रत्यय भी धातु से ही होते हैं, धातु के अधिकार में तिङ् प्रत्ययों को छोड़कर शेष सब कृत् प्रत्यय कहलाते हैं ॥

प्रातिपदिकों के समान कृदन्त शब्द भी प्रथमादि सात विभक्तियों और पुंल्लिङ्गादि तीन लिङ्गों तथा वचनों में परिणत होते हैं ॥

कृत् प्रत्यय भी तिङ् प्रत्ययों के समान भाव, कर्म और कर्त्ता इन तीन अर्थों और भूतादि कालोंमें होतेहैं ॥

यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि कृत् प्रत्ययों के आदि में यदि कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, लकार, शकार और षकार हों तो उनका लोप हो जाता है और अन्त्य के हल् का भी सर्वत्र लोप होता है ॥

यदि किसी प्रत्यय के अङ्ग यु और वु हों तो उनको क्रम से अन और अक आदेश होजाते हैं ॥

यदि किसी प्रत्यय की आदि में ठ, फ, ढ, ख, छ, और घ ये वर्ण हों तो इनको क्रमशः इक, आयन्, एय्, ईन्, ईय् और इय् आदेश होजाते हैं ॥

जिन प्रत्ययों के ञ्, ण् और क् का लोप हुवा हो

उनके पूर्व पदस्थ शब्द का जो पहिला अच् है, उसको वृद्धि होजाती है ॥

कृदन्त को पढ़नेवाले इन नियमों पर ध्यान रक्खें।

कृत् प्रत्ययों के ३ भेद हैं (१) भावकर्मवाचक (२) भाववाचक (३) कर्तृवाचक ॥

१—अथ भावकर्मवाचिनः

सब से पहिले हम भाव और कर्म में होनेवाले कृत्य प्रत्ययों का वर्णन करते हैं ॥

तव्यत्, अनीयर्, यत्, क्यप्, ण्यत्, खल्, युच् और क्त ये आठ प्रत्यय कृत्यसंज्ञक कहलाते हैं और भाव कर्म दोनों में होते हैं ॥ *

ये आठों प्रत्यय अकर्मक धातुओं से भाव में और सकर्मकों से कर्म में होते हैं ॥

तव्यत्—सब धातुओं से भाव और कर्ममें "तव्यत्" प्रत्यय होता है ॥

अकर्मक से भावमें—स्था--स्थीयते यस्मिंस्तद्--स्थातव्यम्=जिसमें ठहरा जाय=आस्—आस्यते यस्मिंस्तद्— आसितव्यम्=जिसमें बैठा जाय। उदाहरणम्—

दुःसङ्गे हि त्वया वत्स! न स्थातव्यं कदाचन।
सत्सङ्गएव नितरामासितव्यं सुखार्थिना=

हे वत्स! दुःसङ्ग में तुझ को कभी न ठहरना चाहिये। सुखार्थी को सदा सत्सङ्ग में ही बैठना चाहिये ॥

---

* भाव में सदा नपुंसकलिङ्ग और कर्म में विशेष्य के अनुसार लिङ्ग होता है ॥

सकर्मकसे कर्ममें—अधि-इ- अधीयते यत्तद्=अध्येतव्यम्=जो पढ़ाजाय। नि-क्षिप्-निक्षिप्यते यत्तद् निक्षेप्तव्यम्=जो रक्खाजाय ॥ उदाहरणम्—

अध्येतव्यानि शास्त्राणि बुद्धिवैशद्यमिच्छता ।
पात्रेष्वर्थानि धनिभिर्निक्षेप्तव्यानि सर्वतः=

बुद्धि का विकाश चाहनेवालों को शास्त्र पढ़ने चाहियें । धनवानोंको सब ओर से पात्रोंमें धन लगाने चाहियें ॥

अनीयर्—तव्यत् के समानही सब धातुओं से भाव और कर्म में अनीयर् भी होता है। भाव में--रम्--रम्यते यस्मिन्स्तद्—रमणीयम्=जिसमें रमण कियाजाय। यत्—यत्यते यस्मिन्स्तद्—यतनीयम्=जिसमें यत्न कियाजाय। कर्म में--कृ--क्रियते यत्तद्—करणीयम्=जो किया जाय। आ-चर्—आचर्यते यत्तद्—आचरणीयम्=जो आचरण किया जाय ॥ उदाहरणम्—

कर्त्तव्ये रमणीयं मा यतनीयं कदाप्यकर्त्तव्ये ।
करणीयश्च शुभं तन्नाचरणीयं शुभेतरं यत्स्यात्=

कर्त्तव्यमें रमण करना चाहिये अकर्त्तव्यमें कभी यत्न नहीं करना चाहिये। शुभकर्म करना चाहिये शुभसे इतर जो अशुभ कर्म है उसका कभी आचरण न करना चाहिये ॥

यत्—अजन्त, अकारोपध पवर्गान्त, शक्, सह्, चर् और वह् आदि धातुओं से भाव और कर्म में (यत्) प्रत्यय होता है। पा—पीयते यत्तद्—पेयम्=जो पीया जाय। दा—दीयते यत्तद्=देयम्= जो दिया जाय। आ--दा—आदेयम्। हा- हेयम्। चि—चेयम्। जि—जेयम्। नी- नेयम्। गै- गेयम्। शक्- शक्यम्।

लभ्- लभ्यम् । सह्- सह्यम् । चर्- चर्यन् । वह्- वह्यते येन तद्- वह्यम् ॥

उदाहरणानि—वस्त्रपूतं जलं पेयं देयं दीनाय चेदुनम् । आदेयं शास्त्रवचनं हेयं दुःखमनागतम् ॥ चेयं धर्मफलं लोके जेयं तु बलवन्मनः । नेयं तदेव सन्मार्गे गेयं हरिकथामृतम् ॥ शक्यं परोपकरणं लभ्यं वस्तुचतुष्टयम् । सह्यं सुखं च दुःखं च चर्यं सत्यव्रतं सदा ॥ वहन्त्यनेन करणे वह्यं शकटमुच्यते ॥

इन उदाहरणों में सब धातु सकर्मक हैं, इसलिये सब से कर्म में प्रत्यय हुवा है । (स्था) धातु अकर्मक है, उससे भाव में प्रत्यय होगा । यथा—स्थीयते यस्मिं स्तद् = स्थेयम् = जिसमें ठहरा जाय । (वह्) धातु से भाव और कर्म में प्रत्यय नहीं होता, किन्तु करण कारक में (यत्) प्रत्यय होकर (वह्यम्) बनता है, जिसके द्वारा वहन कियाजाय, उस शकटादि को (वह्य) कहते हैं ॥

क्यप्—इ, स्तु, शास्, वृ, दृ, जुष्, कृ और भृ आदि धातुओं से भाव और कर्म में (क्यप्) प्रत्यय होता है— ईयते प्राप्यते यः स इत्यः प्राप्तव्यः=जो पाया जाय । स्तु—स्तुत्यः=स्तोतव्यः । शास्—शिष्यः = शिक्षणीयः । वृ-- वृत्यः=वरणीयः । आ—दृ—आदृत्यः= आदरणीयः । जुष्--जुष्यः=सेवनीयः । कृ-कृत्यः=करणीयः । भृ—भृत्यः=भरणीयः ॥

उदाहरणानि—इत्यास्तु सज्जना आर्याः स्तुत्यः सर्वेश्वरो नृभिः । आज्ञाकारी भवेत् शिष्यः वृत्यः कार्येषु

कार्यविद् ॥ आदृत्याः गुणवन्तो ये जुष्यो धर्मपथः सदा ।
कृत्यः स स्याद्य उचितः भृत्यो यो भ्रियते सदा ॥

सज्जन आर्य प्राप्त होने योग्य हैं । ईश्वर मनुष्यों से स्तुति करने योग्य है । आज्ञाकारी शिक्षा करने योग्य होवे । कार्यज्ञ कार्यों में वरण करने योग्य है । गुणवन्त आदर करने के योग्य हैं । धर्मपथ सदा सेवन करने योग्य है । जो उचित है वह करने योग्य है । जिस का सदा भरण किया जाता है वह भृत्य है ॥

ण्यत्—ऋकारान्त और हलन्त धातुओं से तथा आवश्यकार्थक उकारान्त धातुओं से भी भाव और कर्म में [ण्यत्] होता है । कृ-क्रियते यत्तद्=कार्यम्=जो किया जाय । धृ-धार्यम् । वच्-उच्यते यत्तद्- वाक्यम्= शब्दसमयम् । अन्यत्र- वाच्यम् । भुज्-- भुज्यते यत्तद्— भोज्यम् = भक्ष्यम् । अन्यत्र—भोग्यं धनादि । युज्-युज्यते प्रेर्यते यत्तद् योज्यम्=प्रेर्यम् । अन्यत्र- योग्यम् ॥ पू- पूयते यत्तद् पाव्यम् । त्यज्- त्याज्यम् । वप्- वाप्यम् । लू--लाव्यम् । भृ-- भ्रियते या सा=भार्या ॥

उदाहरणानि---कार्यं वेदोदितं कर्म धार्यं धर्म सदा नृभिः । वाक्यं तु शब्दसंज्ञायां वाच्यमन्यदुदीरितम् ॥ भोज्यं भक्ष्ये भोग्यमन्यत् योज्यं प्रेरितमुच्यते । सुचरित्रैः कुलं पाव्यं त्याज्यं दुष्कर्म मानवैः ॥ क्षेत्रे बीजानि वाप्यानि लाव्यं कण्टकमादितः । भ्रियते यातु संज्ञायां भर्त्रा भार्येति कथ्यते ॥

वेदोदित कर्म करना चाहिये । मनुष्योंको सदा धर्म धारण करना चाहिये । शब्द की संज्ञा में वाक्य और

अन्यत्र वाच्य कहलाता है। भक्ष्य में भोज्य अन्यत्र भोग्य और प्रेरित को योज्य और तद्भिन्न को योग्य कहते हैं। सुचरित्रोंसे कुल पवित्र करना चाहिये। दुष्कर्म मनुष्योंको छोड़ना चाहिये। क्षेत्रमें बीज बोने चाहियें। कांटेको पहिलेही से उखाड़ना चाहिये। भर्तासे जिसका भरण किया जाय वह संज्ञा में भार्या कहलाती है॥

खल्—सुख दुःख वाचक सु और दुस् उपसर्ग उपपद में हों तो धातु से भाव और कर्म में (खल्) प्रत्यय होता है सु—कृ— सुखेन क्रियते=सुकरः। दुस्—कृ—दुःखेन क्रियते=दुष्करः। सु-लभ् सुखेन लभ्यते= सुलभः। दुर्—लभ्—दुःखेन लभ्यते=दुर्लभः। इसी प्रकार सु—गम्=सुगमः। दुर्—गम्=दुर्गमः। सु--वच्=सुवचः। दुर्-वच्=दुर्वचः॥ इत्यादि

उदाहरणानि—यत्नेन दुष्करं कर्म सुकरं जायते खलु। सुलभोऽपि हि योऽर्थः स्यात्प्रमादेन स दुर्लभः॥ दुर्गमोऽपि हि यः पन्था गत्यैव सुगमो भवेत्। सुवचा नागरी भाषा यवनानी तु दुर्वचा॥

यत्न से दुष्कर कर्म भी सुकर होजाता है। सुलभ भी जो अर्थ हो वह प्रमाद से दुर्लभ होजाता है। दुर्गम मार्ग भी चलने से सुगम होजाता है। नागरी भाषा सुख से पढ़ी जा सकती है, फारसी बड़ी कठिनता से पढ़ीजाती है॥

युच्--आकारान्त धातुओं से उक्त दोनों उपसर्गों के उपपद होने में 'युच्' प्रत्यय होता है-- सु- पा- सुखेन

पीयते=सुपानम्। दुस्- पा- दुःखेन पीयते=दुष्पानम्। सु-दा=सुदानम्। दुर्- दा=दुर्दानम्। इत्यादि

उदाहरणम्—सुपानं रुच्यते सर्वैर्दुष्पानं कष्टदं स्मृतम्। सुदानं सात्त्विकं ख्यातं दुर्दानं तामसं स्मृतम्=सुपान सबको रुचता है, दुष्पान कष्टका देनेवाला है। सुदान सात्विक और दुर्दान तामस कहलाता है॥

क्त—सब धातुओं से भूतार्थ में 'क्त' प्रत्यय होता है—कृ--कृतम्=किया। पा-पीतम्=पिया। भुज्-भुक्तम्=खाया। विद्—विदितम्=जाना। मृष्—मर्षितम्=सहा॥

उदाहरणानि—मया तत्र गमनं न कृतम्=मैंने वहां गमन नहीं किया। शिशुना पयः पीतम्=बालकने दूध पीलिया। ब्राह्मणैस्तत्र भुक्तम्=ब्राह्मणों ने वहां खाया था। विदितं मया तव चेष्टितम्=मैंने तुम्हारा सङ्कल्प जाना। मर्षितं साधुना खलवाक्यम्=साधुने खलके वाक्य को सहलिया॥

कहीं २ वर्त्तमान अर्थ में भी 'क्त' प्रत्ययका प्रयोग किया जाताहै। यथा—क्व गतश्छात्रः? स इदानीमेव सुप्तः=छात्र कहां गया? वह अभी सोया है। त्वयेदानीं किं क्रियते? पठनार्थमुद्यतोऽस्मि=तुझ से इस समय क्या किया जाता है? पढ़ने के लिये तयार हूं। यन्मयोक्तं तदेव तस्याऽपि मतम्=जो मैंने कहा वही उसका भी मत है॥ इन उदाहरणों के उत्तरवाक्यों में सर्वत्र वर्त्तमान में'क्त' हुवा है॥

भावकर्मके अतिरिक्त कहींर पर कर्त्तामें भी 'क्त' होता है। यथा—सतत्र गतः=वह वहां गया। अहमत्र स्थितः=मैं

यहां ठहरा हूं। त्वं वृक्षमारूढः=तू वृक्षपर चढ़ा है॥

यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि जहां भाव में 'क्त' होता है वहां सदा नपुंसकलिङ्ग होता है यथा-- मया शयितम्=मुझसे सोयागया। तेन हसितम् = उस से हंसा गया॥ जहां कर्त्ता और कर्म में होता है, वहां विशेष्य के अनुसार लिङ्ग होता है। कर्त्ता में—फलं पतितम्=फल गिरा। शिशुः सुप्तः=बालक सोया। लता विस्तृता=लता फैली। कर्म में—त्वया विद्या नाधिगता= तैंने विद्या नहीं पढ़ी। मया धनं लब्धम्=मैंने धन पाया। तेन धर्मोपासितः=उसने धर्म की उपासना की॥ इत्यादि

२—अथ भाववाचिनः

अब केवल भाव में होनेवाले कृत् प्रत्ययोंका निरूपण किया जाता है-

अच्, अप् घञ्, घ, नङ्, कि, ल्युट्, क्त, क्तिन्, युच्, क्यप्, अ, अङ्, और श ये चौदह प्रत्यय सदा भाव में होते हैं॥

भाववाचक शब्दों में अच्, अप्, घञ्, घ, नङ् और कि प्रत्ययान्त पुंलिङ्ग, ल्युट् और क्त प्रत्ययान्त नपुंसकलिङ्ग और शेष स्त्रीलिङ्ग होते हैं॥

अच्—इकारान्त धातुओं से भाव में अच् प्रत्यय होता है—इ--ईयते प्राप्यते पृथिव्यामित्ययः=लोहः। चि-चीयतेऽस्मिन्निति चयः=राशिः। जि--जीयतेऽस्मिन्निति जयः=उत्कर्षः। क्षि-क्षीयते नश्यते वध्यते वाऽस्मिन्निति क्षयः=नाशः निवासो वा॥

उदाहरणानि—तप्तः सन् प्रणमत्ययः=लोहा तपाया हुवा लचता है। गृहस्थेनाऽऽवश्यकपदार्थानां सञ्चयः कार्यः=गृहस्थ को आवश्यक पदार्थों का सञ्चय करना चाहिये। यतो धर्मस्ततो जयः=जहां धर्म है वहां जय है। जिगीषुणा द्विषतां क्षयः कार्यः=जयाभिलाषीने शत्रुओंका नाश करना चाहिये। विरक्तेन गृहेषु क्षयस्त्यज्यते=विरक्त से घरों में रहना छोड़ दिया जाता है॥

अप्—उकारान्त, ऋकारान्त और किन्हीं२ हलन्तधातुओं से भी भाव में 'अप्' प्रत्यय होता है। उकारान्त--भू—भूयतेऽस्मिन्निति भवः=संसारः उत्पत्तिर्वा। परि-भू=परिभवः=तिरस्कारः। अनु-भू=अनुभवः=साक्षात्कारः। प्र-सू—प्रसूयतेऽस्मिन्निति प्रसवः=उत्पत्तिः। सं-स्तु-संस्तूयतेऽस्मिन्ननेन वा संस्तवः=परिचयः॥ ऋकारान्त-कृ-क्रियतेऽनेनेति करः=हस्तः। शृ-शीर्यतेऽनेनेति शरः=बाणः। वि-स्तृ--विस्तरः॥ हलन्त--आ-युध्—आयुध्यतेऽनेनेत्यायुधम्=शस्त्रम्। सम्-यम्—संयम्यतेऽस्मिन्ननेन वा मनः संयमः=मनोनिग्रहः। नि—यम्=नियमः। मद्—माद्यतेऽस्मिन्ननेन वा मदः=हर्ष अभिमानो वा। यदि 'मद्' धातु के पूर्व कोई उपसर्ग हो तौ 'घञ्' प्रत्यय होता है प्रमादः। उन्मादः॥ हन्—हन्यतेऽस्मिन्निति वधः=हिंसाकर्म। विग्रह्—विगृह्यतेऽस्मिन्निति विग्रहः। अवग्रहः। प्रग्रहः। निग्रहः। प्रतिग्रहः। संग्रहः। आग्रहः। प्र--क्रम्--प्रक्रम्यतेऽस्मिन्ननेन वा=प्रक्रमः। उपक्रमः=प्रथमारम्भः॥ सम्—अज्=समजः=पशूनां समुदायः। उद्—अज्=उदजः=पशूनां प्रेरणम्॥

उदाहरणानि—रागिणो जनाः पुनःपुनर्भवाब्धौ निमज्जन्ति=रागीजन वारवार भवसागर में डूबते हैं। परिभवे पराक्रम एव भूषणम्=तिरस्कार में पराक्रमही भूषण है। अनुभवेन विना विद्यापि फलं न प्रसूते=अनुभव के विना विद्या भी फल नहीं उत्पन्न करती। महात्मनां प्रसवो लोकाभ्युदयाय भवति=महात्माओं का जन्म संसार के कल्याण के लिये होता है। परिचयार्थं गुणानां संस्तवः क्रियते=परिचय के लिये गुणोंका वर्णन किया जाता है। दानेन करः शोभते=दान से हाथ शोभा पाता है। धनुषि शरः सन्धीयते=धनुष में बाण जोड़ा जाताहै। ज्ञातेऽर्थे वाचां विस्तरेण किम्?=जाने हुवे विषयमें वाणीके फैलावसे क्या? अशिक्षिताय भीरवे चायुधं न दातव्यम्=अशिक्षित और डरपोक को शस्त्र नहीं देना चाहिये। सर्वार्थसिद्धौ मनसः संयम एव परं कारणम्=सब अर्थों की सिद्धिमें मनका रोकना ही प्रधान कारण है। नियमं विना किमपि कार्यं न सिध्यति=नियम के विना कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। मदोन्मत्ताः कस्यापि कार्यस्य परिणामं नावेक्षन्ते=मदोन्मत्त किसी कार्य के परिणामको नहीं देखते। मा कुर्याः प्राणिनां वधः=प्राणियों का वध मत कर। वैयाकरणेन पदानां विग्रहावग्रहौ क्रियेते=वैयाकरण से पदों के विस्तार और संक्षेप कियेजाते हैं। केनापि समं विग्रहं न कुर्वीत=किसी के भी साथ विरोध मत करो। वृष्टेरवग्रहेण दुर्भिक्षो जायते=वृष्टिके रुकने से दुर्भिक्ष होता है। अपराधिनां प्रग्रहो भविष्यति=अपराधियों को

खेल होगा। शत्रूणां निग्रहः कार्यः = शत्रुओं का निग्रह करना चाहिये। ब्राह्मणानां षट् कर्मसु प्रतिग्रह एवावरं कर्म = ब्राह्मणों के ६ कर्मों में प्रतिग्रह (दान लेना) ही नीच कर्म है। गृहस्थेन तावानेव संग्रहः कार्यः यावान् योगक्षेमायालं स्यात् = गृहस्थ को उतनाही संग्रह करना चाहिये जितना योगक्षेम के लिये पर्याप्त हो। सर्वैः शुभकर्मस्वेवाग्रहो विधेयः = सबको शुभकर्मों में ही आग्रह करना चाहिये। कविना ग्रन्थस्य प्रक्रम उपक्रमो वा क्रियते = कवि से ग्रन्थका आरम्भ किया जाता है। समजेन पशवोऽपि शत्रून् निवारयन्ति = समुदाय से पशु भी शत्रुओं का निवारण करते हैं। स्वामिनो वनाय पशूनामुदजं कुर्वन्ति = स्वामी वन के लिये पशुओं का प्रेरण करते हैं॥

घञ्—प्रायः धातुओं से भाव में [घञ्] प्रत्यय होता है-भू-भूयतेऽस्मिन्निति = भावः। रञ्ज्- रज्यतेऽस्मिन्निति = रागः। पच्=पाकः। भज् = भागः। लभ् = लाभः। दा = दायः। अधि--इ = अध्यायः। आ--धृ = आधारः। प्र - स्तु = प्रस्तावः। उद्- गृ = उद्गारः। वि--स्तृ = विस्तारः। अव—तृ = अवतारः। आ – लप् = आलापः। संलापः। विलापः॥ सम्--वद् = संवादः। विवादः। परिवादः--परीवादः। अवग्राहः। परिभावः। समाजः॥

उदाहरणानि—नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः = असाव का भाव और भाव का अभाव नहीं होता। राग एव मनुष्याणां बन्धहेतुः = रागही मनुष्यों के बन्ध का कारण है। गृहस्थैः पाके सिद्धे सति

दीनेभ्यो भागो देयः = गृहस्थोंने पाक सिद्ध होनेपर दीनों के लिये भाग देना चाहिये। को लाभो? गुणिसङ्गमः = लाभ क्या है? गुणियोंका समागम। दायादाः दायभाग नियमेन दायं प्राप्नुवन्ति = वारिस कानूनविरासत से विरसे को पाते हैं। ग्रन्थाध्यायेषु किमधीयते भवद्भिः? = ग्रन्थके अध्यायों में आप से क्या पढ़ा जाता है? ह्यस्स-भायामध्यक्षेण कः प्रस्तावः कृतः? = कल सभा में सभा-पति ने क्या प्रस्ताव किया था? हृदयस्योद्गाराः वाचा स्वयमेव निःसरन्ति=हृदय के उद्गार (भाव) वाणी से अपने आप निकलते हैं। तन्तूनां विस्तारेण पटोजायते =तन्तुओं के फैलावसे कपड़ा बनताहै। सिद्धानामवता-रोहि धर्म संरक्षणाय भवति=सिद्धोंका अवतार धर्मकी रक्षा के लिये होता है। गायकेन स्वराणामालापः क्रियते= गवैये से स्वरों का आलाप किया जाता है। वाग्मिना सभायां संलापो विधीयते=वक्ता से सभा में सुभाषण किया जाता है। दुःखार्त्तेन भृशं विलापः क्रियते=दुःखा-र्त्त से बार बार विलाप किया जाता है। सर्वैःसह संवाद एव कार्यः=सबके साथ संवादही करना चाहिये। केनाऽ-पि सह विवादो न कर्त्तव्यः=किसीके भी साथ विवाद नहीं करना चाहिये। कस्यापि परिवादो न वक्तव्यो न श्रोतव्यश्च=किसी की भी निन्दा न कहनी और न सुननी चाहिये। वृष्टेरवग्राहो कदापि माभूयात्=वृष्टिका अवरोध कभी मतहो। तेजस्विनां परिभावः केनापि कर्त्तुं न शक्यते =तेजस्वियोंका तिरस्कार किसीसे नहीं किया जासकता। विदुषां समाजे मूर्खाणां मौनमेव विभूषणम्=विद्वानों के

समाज में मूर्खों का मौनही भूषण है॥

घ—किन्हीं २ धातुओं से भाववाचक संज्ञा में 'घ' प्रत्यय होता है। गो—चर्—गाव इन्द्रियाणि चरन्त्यस्मिन्निति गोचरः=प्रत्यक्षः। सह चरन्त्यनेन सहचरः=मित्रम्। आ—पण्—आपणन्तेऽस्मिन्निति आपणः=क्रयविक्रयस्थानः। आ—कृ—आकुर्वन्त्यस्मिन्निति=आकरः=खानिः। आ—ली—आ समन्ताल्लीयतेऽस्मिन्निति=आलयः=मन्दिरम्॥

उदाहरणानि—अगोचरोऽर्थो बुद्ध्या विमर्षणीयः=परोक्ष अर्थ बुद्धि से विचारणीय है। सहचरेष्वभिचारो नाचरणीयः = सहचरों में अभिचार (भेद) नहीं डालना चाहिए। आपणे गत्वा वस्त्राणि क्रीणीमहे=बाज़ार में जाकर कपड़े खरीदेंगे। आकराद्धिरण्यं प्रभवति=खान से सोना निकलता है। आलयादृते मनुष्यैः कुत्र स्थीयेत? गृह के सिवाय मनुष्यों से कहां ठहरा जावै?

नङ्—यज्, याच्, यत्, प्रच्छ् और स्वप् आदि धातुओं से भाव में नङ् प्रत्यय होता है—यज्—इज्यतेऽस्मिन्ननेनवा=यज्ञः। याच्—याच्यतेऽनया=याच्ञा। यत्=यत्नः। प्रच्छ्=प्रश्नः। स्वप्=स्वप्नः॥

उदाहरणानि—यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः=देवताओं ने यज्ञ से विष्णु का पूजन किया। याच्ञा समा नास्त्यपमान भूमिः=याचना के समान और कोई अपमान की भूमि नहीं है। यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः=यत्न करने पर यदि कार्य सिद्ध न हो तो क्या दोष है?

जिज्ञासुना विनीतभावेन प्रश्नः कर्त्तव्यः नतु मात्सर्येण= जिज्ञासु ने नम्रभाव से प्रश्न करना चाहिए न कि मत्सरता से। स्वप्ने किमपि नानुभूयते= निद्रा में कुछ भी अनुभव नहीं किया जाता॥

कि—उपसर्ग या कर्म उपपद हो तो धातु से भाव में 'कि' प्रत्यय होता है। उपसर्गोपपद--वि—धा—विधीयन्तेऽस्मिन्नर्था इति विधिः=आज्ञा, प्रेरणा वा। नि-धा-निधीयन्तेऽस्मिन्नर्थानीति निधिः=कोषः। कर्मोपपद—जलं धीयतेऽस्मिन्निति जलधिः=समुद्रः। इषवो धीयन्तेऽस्मिन्निति इषुधिः=तर्कशः॥

उदाहरणानि—कर्त्तव्याकर्तव्येषु शास्त्रेण विधिः क्रियते=कर्तव्याऽकर्त्तव्य में शास्त्र से आज्ञा की जाती है। राजपुरुषैः प्रजाभ्यः करमादाय निधौ निधीयते=प्रजाओं से कर लेकर राज पुरुषों से कोष में रक्खा जाता है। चतसृषु दिक्षु जलधिना वेष्टिता पृथिवी=चारों दिशाओं में पृथिवी समुद्र से वेष्टित है। शरैः पूर्ण इषुधिः कटिना बध्यते=बाणोंसे भरा हुआ तर्कश कमरसे बान्धा जाता है

ल्युट्—सब धातुओं से भाव में 'ल्युट्' प्रत्यय होता है। कृ—क्रियतेऽनेन=करणम्। जीव्=जीवनम्। मृ=मरणम्। श्रु—श्रूयतेऽनेन=श्रवणम्। गम्=गमनम्। शी=शयनम्। आस्=आसनम्। स्था=स्थानम्। या=यानम्॥

उदाहरणानि—करणं जीवनं प्रोक्तं मरणं तदभावता। शास्त्रस्य श्रवणं कार्यं गमनं साधुसङ्गतौ॥ दिवा न शयनं कार्यमासनञ्च गुरोरधि। स्थानयानेऽपि कर्तव्ये यथाऽवसरमात्मनः॥

करनाही जीवन है और उसका न होनाही मरण है। शास्त्र को सुनना चाहिए, साधु संगति में जाना चाहिए। दिन में सोना नहीं चाहिए और गुरु के ऊपर बैठना न चाहिए। अपने स्थान यान भी यथाऽवसर करने चाहियें॥

क्त - सब धातुओंसे भूतकालिक भाव में 'क्त' प्रत्यय होता है। कृ—अकारि यत्तत् कृतम्=किया गया। श्रु—अश्रावि यत्तत् श्रुतम्=सुना गया। भुज्=भुक्तम्। पा=पीतम्। गम्=गतम्। नी=नीतम्। आस्=आसितम्। शी=शयितम्। स्था=स्थितम्। या=यातम्। गै=गीतम्। जल्प्=जल्पितम्। भक्ष्=भक्षितम् इत्यादि॥

उदाहरणानि—किन्त्वयाऽऽह्निकं कृतम्? क्या तैने आन्हिक (दैनिक कर्म) कर लिया? मया तस्य व्याख्यानं श्रुतम्=मैंने उसका व्याख्यान सुना था। यज्ञावसाने ब्राह्मणैस्तत्र भुक्तम् = यज्ञ की समाप्तिपर ब्राह्मणों ने वहां खाया था। शिशुना पयः पीतम् = बालक ने दूध पीलिया। मया तत्र न गतम्=मुझसे वहां नहीं जायागया। विषयेषु नीतं मनस्तापमुत्पादयति = विषयों में ले जाया गया मन जलन उत्पन्न करताहै। दिवा मया यत्रासितं रात्रौ तत्रैव शयितम् = दिनमें मुझसे जहां बैठा गयाथा रात को वहीं सोया गया। अत्र स्थितं तेन तत्र यातं मया = उससे यहां पर ठहरा गया और मुझसे वहां पर जायागया। आदिकविना रामायणे रामचरितं गीतम् = वाल्मीकिसे रामायणमें रामचरित गाया गया। तेन तत्र

किं जल्पितम् = उसने वहां क्या कहा था। मया तत्र न भक्षितम् = मैंने वहां पर नहीं खाया॥

क्तिन्—सब धातुओं से भाव में 'क्तिन्' प्रत्यय होता है—कृ-क्रियतेऽनया कृतिः=रचना। भृ--भृतिः= वेतनम्। धृ-धृतिः=धारणा। मन्- मन्यतेऽनया=मतिः। बुध्=बुद्धिः। गम्=गतिः। नम्=नतिः। भज्=भक्तिः। यज्=इष्टिः। श्रु--श्रूयतेऽनया=श्रुतिः। स्तु=स्तुतिः। आप्=आप्तिः। ग्लै=ग्लानिः। हा=हानिः॥ इत्यादि

उदाहरणानि—विचित्रा पाणिनेः कृतिः=पाणिनि की रचना विचित्र है। स्वामिना भृत्येभ्यो भृतिर्दीयते= स्वामी से भृत्यों के लिए वेतन दिया जाता है। धृति-रेव धर्मस्य प्रथमं लक्षणम्=धैर्यही धर्म का पहिला लक्षण है। मतिरेव बलाद् गरीयसी=मतिही बलसे बड़ी है। बुद्धिर्यस्य बलं तस्य=जिसमें बुद्धिहै उसीमें बल है। गहना कर्मणां गतिः=कर्मों की गति बड़ी गहन है। नतिरेवोन्नतेः कारणम्=नतिही उन्नति का कारण है। परमात्मनि सदा भक्तिः कार्या=परमात्मा में सदा भक्ति करनी चाहिये। स्वर्गकाम इष्टिना यजेत=स्वर्ग चाहने वाला इष्टि से यज्ञ करे। श्रुतिभिः श्रोतव्यो धर्मः=श्रु-तियों से धर्म सुनना चाहिये। उपासकाः स्तोत्रैः स्तुतिं कुर्वन्ति=उपासक स्तोत्रों से स्तुति करते हैं। धर्मेणार्थ-स्याप्तिः कर्त्तव्या=धर्म से अर्थकी प्राप्ति करनी चाहिये। विषयासक्तौ शरीरस्य ग्लानिरर्थस्य हानिश्च जायते= विषयासक्ति में शरीर की ग्लानि और अर्थ की हानि होती है॥

युच्—णिजन्त सब धातुओंसे तथा अणिजन्त आस्, घट्, विद्, वन्द्, और अनिच्छार्थक इष् धातु से भाव में 'युच्' प्रत्यय होता है।

णिजन्त—भू-भावयतेऽनया=भावना। चित्- चेतयतेऽनया=चेतना। धृ- धारयतेऽनया=धारणा। वस्=वासना। कम्=कामना। युज्=योजना। स्था=स्थापना। वि-ज्ञा=विज्ञापना॥ अणिजन्त—आस्-आस्यतेऽनया=आसना। घटयतेऽनया=घटना। विद्यतेऽनया=वेदना। वन्द्यतेऽनया=वन्दना। अन्विष्यतेऽनया=अन्वेषणा॥

उदाहरणानि—यादृशी भावना यस्य बुद्धिर्भवति तादृशी=जैसी जिसकी भावना होती है वैसीही उसकी बुद्धि होती है। शरीरे यावच्चेतना वर्त्तते तावदेव जीवनम्=शरीर में जब तक चेतनता है तभी तक जीवन है। चित्तस्य धारणामन्तरा समाधिर्न सेत्स्यति=चित्त की धारणा के विना समाधि सिद्ध न होगी। वासना तन्तुभिर्बद्धो जीवो जगति जाजायते=वासना के तन्तुओं से बन्धा हुआ जीव जगत् में वार वार जन्म लेता है। भोगैः कामनाया पूर्तिर्न भवति=भोगों से कामना की पूर्ति नहीं होती। कार्याक्षमे भृत्ये योजनया किं भविष्यति?=भृत्य के कार्य्य में असमर्थ होने पर योजना से क्या होगा? तेन तत्र पाठशालायाः स्थापना कृता=उसने वहां पर पाठशाला की स्थापना की। अद्यैव मया तस्य विज्ञापना श्रुता = अभी मैंने उसकी सूचना सुनी है। गुरूणामुपरिष्टादासना न कर्त्तव्या=गुरुओं के

ऊपर आसना नहीं करनी चाहिये। ह्यस्तत्रैका महती घटना सञ्जाता=कल वहां पर एक बड़ी घटना हुई। नहि वन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम्=भारी प्रसव की वेदना को वन्ध्या नहीं जानती। सायं प्रातः सर्वदेश्वरस्य वन्दना कार्या=सुबह शाम सदा ईश्वर की वन्दना करनी चाहिये। मुमुक्षुणा ह्यात्मतत्त्वस्यान्वेषणा कर्त्तव्या=मुमुक्षु को आत्मतत्त्व की अन्वेषणा करनी चाहिये॥

क्यप्—व्रज्, यज्, विद् और शी आदि धातुओं से भाव में 'क्यप्' प्रत्यय होता है—व्रज्-व्रज्यतेऽनया=व्रज्या=यात्रा। यज्-इज्यतेऽनया=इज्या=इष्टिः। विद्-विद्यतेऽनया = विद्या। शी-शय्यतेऽनया=शय्या॥

उदाहरणानि—व्रज्या तीर्थेषु कर्तव्या इज्या पर्वणि पर्वणि। विद्या समधिगन्तव्या शय्या त्याज्याऽरुणोदये= तीर्थों में यात्रा करनी चाहिये, पर्व पर्व में इष्टि करनी चाहिये, विद्या प्राप्त करनी चाहिये और सूर्योदय होने पर शय्या छोड़ देनी चाहिये॥

अ—सन् प्रत्ययान्त धातुओंसे तथा हलन्त गुरुमान् धातुओं से भाव में 'अ' प्रत्यय होता है। सन्नन्त—कृ-कर्त्तुमिच्छा=चिकीर्षा। गम्=जिगमिषा। वच्-वक्तु-मिच्छा=विवक्षा। पा=पिपासा। ज्ञा=जिज्ञासा। ग्रह्-ग्रहीतुमिच्छा = जिघृक्षा। हा = जिहासा। भुज् = बुभुक्षा। लभ्- लब्धुमिच्छा = लिप्सा। दा—दातु-मिच्छा = दित्सा॥ हलन्त गुरुमान्—ईह्-ईहितुमिच्छा ईहा। ऊह्-ऊहितुमिच्छा = ऊहा॥ इत्यादि।

उदाहरणानि—चिकीर्षां विना कार्ये प्रवृत्तिः कथं स्यात् ? = करने की इच्छा के विना कार्य में प्रवृत्ति कैसे हो ? भवतां तत्र जिगमिषा नास्ति किम् ? आपकी वहां जाने की इच्छा नहीं है क्या ? यस्य विवक्षैव नास्ति तस्य भाषणे कथं प्रवृत्तिः स्यात् = जिसको कहने की इच्छाही नहीं है उसकी बोलने में प्रवृत्ति कैसे हो ? ग्रीष्मे पिपासा वर्द्धते = ग्रीष्म ऋतु में पिपासा बढ़ती है। जिज्ञासया सूक्ष्मोऽप्यर्थो ज्ञायते = जिज्ञासा से सूक्ष्म अर्थ भी जाना जाता है। यद्यप्यनुकूलेषु जिघृक्षा प्रतिकूलेषु जिहासा च प्राणिनां स्वाभाविकी तथाप्यविद्यया तैरादेयं हीयते हेयं च गृह्यते = यद्यपि अनुकूल में जिघृक्षा और प्रतिकूल में जिहासा प्राणियों की स्वाभाविक है तथापि अविद्या से आदेय छोड़ा जाता है और हेय ग्रहण किया जाता है । दारिद्र्ये बुभुक्षा वरीवृद्धयते = दरिद्रता में भूख बार बार बढ़ती है। मृतस्य लिप्सा कृपणस्य दित्सा श्रुता न केनाऽपि न चेह दृष्टा = मुर्दे में लेने की इच्छा और कंजूस में देने की इच्छा न किसीने यहां सुनी और न देखी। यथा जङ्गमेष्वीहा तथैव विद्वत्सूहा विद्यते = जैसे जङ्गमों में चेष्टा वैसेही विद्वानों में विचारणा रहती है॥

अङ्—जृ, त्रप् , क्षम् , लज् , दय् , चिन्त् , पूज् , कथ् , चर्च और अर्च् धातुओं से तथा उपसर्ग पूर्वक आकारान्त धातुओंसे भी भावमें अङ् प्रत्यय होता है । जृ—जीर्यतेऽनयाऽस्यां वा = जरा । त्रप्=त्रपा । क्षम् = क्षमा । लज् = लज्जा । दय् = दया । चिन्त् = चिन्ता ।

पूज् = पूजा । कथ्=कथा । चर्च्=चर्चा । अर्च्=अर्चा । नि—स्था = निष्ठा। आ—स्था = आस्था । सम्—ख्या = संख्या । आ—ख्या = आख्या । सम्-ज्ञा = संज्ञा । श्रत् और अन्तर् अव्ययों के योग में भी 'अङ्' होता है श्रत् धीयतेऽस्यां सा श्रद्धा । अन्तर्धीयतेऽस्यां सा=अन्तर्धा॥

उदाहरणानि—जरया जीर्यते कायस्त्रपया भूष्यते नरः = जरा से शरीर जीर्ण होता है, लज्जा से मनुष्य भूषित होताहै। सर्वदा भूषणं पुंसां क्षमा लज्जेव योषिताम् = जैसे लज्जा सदा स्त्रियों का भूषण है वैसेही क्षमा पुरुषोंका भूषणहै । दया दीनेषु कर्त्तव्या चिन्ता शास्त्रस्य सर्वदा = सदा दीनों पर दया और शास्त्र की चिन्ता करनी चाहिए । पूजा गुरूणां कर्तव्या कथा धर्मात्मनां सदा = गुरुओं की पूजा और धर्मात्माओं की कथा करनी चाहिये । चर्चा विधेया शास्त्राणामर्चा प्रेम्णा सतां सदा = सदा शास्त्रों की चर्चा और प्रेमसे सत्पुरुषोंकी पूजा करनी चाहिये। निष्ठा धर्मे विधेया वै आस्था तु शुभकर्मसु = धर्म में निष्ठा और शुभकर्मों में आस्था करनी चाहिये। अङ्कैस्तु संख्या कर्तव्या संज्ञयाख्या विधीयते = अङ्कों से संख्या करनी चाहिये, संज्ञासे आख्याकी जातीहै । श्रद्धा सत्यस्य जननी अन्तर्धा गोपनं स्मृतम् = श्रद्धा सत्य की माता है और अन्तर्धा छिपानेको कहतेहैं

श—कृ, इष्, परिचर्, परिसृ, जागृ और मृग् धातुओं से भाव में 'श' प्रत्यय होता है । कृ—क्रियते ऽनया = क्रिया । इष् = इच्छा । परिचर्या । परिसर्या । जागर्या । मृगया ॥

उदाहरणानि—क्रिया या करणैर्जाता मनसेच्छा प्रजायते = क्रिया वह है जो करणों से उत्पन्न हो, मन से इच्छा उत्पन्न होती है। परिचर्या गुरोः कार्या परिसर्या च साधुषु = पूजा गुरु की करनी चाहिए और साधु के समीपमें जाना चाहिए। जागर्या विषमे कार्या हिंस्रानां मृगया वने = विषमकालमें जागरण करना चाहिये और हिंस्र जन्तुओं का वन में शिकार करना चाहिये॥

इति भाववाचिनः।

२—अथ कर्तृवाचिनः

अब कर्ता में जो कृत् प्रत्यय होते हैं, उनका निरूपण किया जाता है॥

कर्तृवाचक प्रत्यय दो प्रकार के हैं, एक सामान्य अर्थ में होनेवाले दूसरे ताच्छील्य अर्थ में होने वाले, जिन को सामान्य रीति पर कर्त्ता सम्पादन करे वे सामान्यार्थक और जिनके करनेका कर्त्ता में शील अर्थात् स्वभाव हो वे ताच्छील्यार्थक कहलाते हैं॥

अब हम विस्तरभय से सब प्रयोगों के उदाहरण न लिखेंगे किन्तु निदर्शनार्थ किन्हीं २ प्रयोगों के उदाहरण लिखेंगे॥

१—सामान्यार्थकाः

ण्वुल्—सब धातुओं से कर्ता में 'ण्वुल्' प्रत्यय होता है। कृ—करोतीति = कारकः। नी = नायकः। पू = पावकः। हन् = घातकः। दा = दायकः। जन् =

जनकः । लभ् = लम्भकः । दृश् = दर्शकः । यज् = याजकः । अधीङ् = अध्यापकः । सिच् = सेचकः । भुज् = भोजकः। ज्ञा = ज्ञापकः । ग्रह् = ग्राहकः। इत्यादि *

उदाहरणानि—पावकः दहनेन सर्वान्पदार्थान् पुनाति= अग्नि जलानेसे सब पदार्थोंको पवित्र करताहै । अध्यापकः शिष्यानध्यापयति = अध्यापक शिष्योंको पढ़ाताहै

तृच्—कृ—करोतीति = कर्त्ता । भृ = भर्त्ता । नी = नेता । पा = पाता । दृश् = द्रष्टा । वच् = वक्ता । श्रु = श्रोता । हन् = हन्ता । जन् = जनिता । लभ् = लब्धा । यज् = यष्टा । अधीङ् = अध्येता । सिच् = सेक्ता । भुज् = भोक्ता । ज्ञा = ज्ञाता । सह् = सोढा । वह् = वोढा । ग्रह् = ग्रहीता ॥ इत्यादि

उदाहरणानि—कर्त्ता कर्मफलेन युज्यते = कर्त्ता कर्म फल से युक्त होता है । नेतारमनुयान्त्यनुयायिनः = अनुयायी नेताके पीछे चलतेहैं । किं करिष्यन्ति वक्तारः श्रोता यत्र न विद्यते = जहां श्रोता नहीं है वहां वक्ता क्या करेंगे ?

ल्यु—नन्दयतीति = नन्दनः । मदनः । दूषणः । साधनः । वर्द्धनः । शोभनः । रोचनः । सहनः । तपनः । दमनः । जल्पनः । रमणः । दर्पणः । यवनः । लवणः । जनार्दनः । मधुसूदनः । विभीषणः । इत्यादि ।

उदाहरणानि—मदनः विषयासक्तान् मदयति = काम विषयासक्तोंको उन्मत्त करता है । विद्यया मनुष्यः

* ण्वुल् में ण और ल्का लोप और 'वु' को 'अक' आदेश होजाता है ॥

शोभनो जायते नतु भूषणैः = विद्या से मनुष्य शोभन होता है न कि भूषणों से ॥

खिनि—गृह्णातीति = ग्राही । उत्साही । स्थायी । मन्त्री । विषयी । अपराधी । ब्रह्मवदतीति । ब्रह्मवादी । = मुनिः । ब्रह्मचारी = माणवकः । साधु करोति साधुकारी = सज्जनः । साधुदायी = पुण्यात्मा । अनु—पश्चात् यातीति अनुयायी = पुत्रः शिष्यो वा । उप—समीपे जीवति उपजीवी = आश्रितः । स्थण्डिले शेते स्थण्डिलशायी = भिक्षुः । क्षीरं पिबति क्षीरपायी = शिशुः । आत्मानं पण्डितं मन्यते = पण्डितमानी । आत्मानमभि—समन्तान्मन्यते = अभिमानी । आत्मानं बहु मन्यते = बहुमानी । मित्रं हतवान् = मित्रघाती । सोमेनेष्टवान् सोमयाजी । अग्निष्टोमयाजी ॥

उदा०—अनुयायिन अग्रेसरमनुयान्ति = अनुयायी लोग अग्रणी के पीछे जाते हैं । अभिमानी अन्यानवमन्यते = अभिमानी दूसरों का अवमान करता है ॥

इनि—मद्यं विक्रीतवान् = मद्यविक्रयी । रसविक्रयी ।

उदा०—मद्यविक्रयिणो लोके निन्दनीया भवन्ति = मद्य बेचनेवाले लोक में निन्दनीय होते हैं ॥

अच्—प्लवतीति प्लवः = जलयानम् । चोरः = तस्करः । श्वानं पचतीति श्वपचश्चाण्डालः । अंशं हरति = अंशहरो दायादः । भागहराः = भ्रातरः । पूजामर्हति पूजार्हः = विद्वान् । विद्यार्हः = छात्रः । दण्डार्हः = अपराधी । शं करोतीति = शङ्कर ईश्वरः । शंवदः = ब्राह्मणः । खे शेते = खशयः = पक्षी । कूपशयः = मण्डूकः । उद-

रेण शेते = उदरशयः सर्पः । गिरौ शेते = गिरिशः शिवः । गृह्णन्ति धारयन्ति आकर्षणादिना सर्वान् पदार्थानिति ग्रहाः = सूर्यादयः ॥

उदा०—प्लवेन जनाः नदीं तरन्ति = बेड़े से लोग नदी को तरते हैं । अंशहराः दायाद्यमनुहरन्ति = वारिस विरासत को पाते हैं । खशयैः नभस्युड्डीयते = पक्षियों से आकाश में उड़ा जाता है ॥

ण्वुल्—नृत्यतीति = नर्त्तकः । खनतीति = खनकः । रज्जतीति = रजकः । ल्युट्-गायतीति = गायनः थकन्--गाथकः ।

उदा०—नर्त्तकेण नृत्तं गायकेन गीतम् = कत्थक ने नांचा और गवैये ने गाया ।

क—क्षिपतीति = क्षिपः । लिखः । बुधः । कृशः । प्रीणातीति = प्रियः । प्रकर्षेण जानाति = प्रज्ञ. । विज्ञः । गाः ददाति = गोदः । धनदः । आ-समन्तात् ह्वयति = आह्वः । प्रह्वः । समे तिष्ठति = समस्थः । विषमस्थः । द्विस्तिष्ठति = द्विष्ठः । त्रिष्ठः । द्वाभ्यां पिबतीति = द्विपः = हस्ती । तुन्दं परिमार्ष्टि तुन्दपरिमृजः = अलसः । शोकम् अपनुदति = शोकापनुदः = सुहृत् । कौ पृथिव्यां मोदते = कुमुदः । महीं दधातीति = महीध्रः = पर्वतः । सर्वं प्रकर्षेण ददाति = सर्वप्रदः । पथिप्रज्ञः । गाः संचष्टे = गोसंख्यः = गोपालः । गृह्णाति धान्यादिकमिति = गृहम्

उदा०—कुमुदश्चन्द्रोदयमपेक्षते = कुमुद चन्द्रोदयको चाहता है । महीध्राः पृथिवीं धारयन्ति = पर्वत पृथिवी को धारण करते हैं ॥

श—पिबतीति = पिबः । जिघ्रः । धमः । धयः । पश्यः । लिम्पतीति = लिम्पः । विन्दः । धारयतीति = धारयः । पारयः । वेदयः । उदेजयः । चेतयः । सातयः । साहयः । ददातीति = ददः । दधातीति = दधः । गाः विन्दतीति = गोविन्दः । अरविन्दम् ॥ इत्यादि

उदा०—पश्यः सर्वान् पश्यति = देखनेवाला सबको देखता है । चेतयः सर्वान् चेतयति = चेतनवाला सब को चिताता है ।

ण—ज्वलतीति = ज्वालः । चालः । अवश्यायः । प्रतिश्यायः । ददातीति = दायः । धायः । विध्यतीति = व्याधः । आ-समन्तात् स्रवतीति = आस्रावः । संस्रावः । अति-एतीति = अत्यायः । अव-स्यतीति = अवसायः । अव-हरतीति = अवहारः । लिहतीति = लेहः । श्लिष्य-तीति = श्लेषः । श्वसितीति = श्वासः । दुनोतीति = दावः । नयतीति = नायः । गृह्णातीति = ग्राहः = नक्रः

उदा०—हेमन्तेऽतिश्यायेन पर्वता आच्छन्ना भवन्ति = हेमन्त ऋतु में बर्फ से पर्वत ढके हुवे होते हैं । व्याधः मृगानवरुध्य बाणेन विध्यति = व्याध मृगों को रोककर बाण से बीन्धता है ॥

अण्—ग्रन्थं करोति = ग्रन्थकारः । वृत्तिकारः । भाष्यकारः । कुम्भकारः । स्वर्गं ह्वयतीति=स्वर्गह्वायः । तन्तून् वयति=तन्तुवायः । सस्यानि मातीति=सस्यमायः॥

उदा०—भाष्यकारेण यदुक्तं वैयाकरणानां तदेव

प्रमाणम्=भाष्यकारने जो कुछ कहा वैयाकरणों को वही प्रमाण है। तन्तुवायस्तन्तुभिः वस्त्राणि वयति=जुलाहा सूतों से कपड़ों को बुनता है॥

ट—दिवा करोति दिवाकरः=सूर्यः। विभां करोति=विभाकरः। प्रभाकरः। भास्करः। अहस्करः। निशां करोति निशाकरश्चन्द्रः। कर्मकरः=भृत्यः। निशायां चरति=निशाचरश्चौरः। वनेचरः सिंहः। पुरःसरति=पुरःसरः। पूर्वसरः। अग्रतः सरः। अग्रेसरः। दुःखं करोति दुःखकरः=व्याधिः। सुखकरमारोग्यम्। यशस्करी विद्या॥

उदा०—भास्करः प्रभाते पूर्वस्यां दिश्युदेति=सूर्य प्रातःकाल पूर्वदिशा में उदित होता है। निशाचराः नक्तं चरन्ति=चोर रातको विचरते हैं। अग्रेसरः यूथस्याग्रतएव सरति=अग्रेसर यूथ के आगेही चलता है॥

टक्—छन्दांसि गायति=छन्दोगः। सामगः। क्षीरं पिबति=क्षीरपः मद्यपः। शत्रुं हन्ति=शत्रुघ्नः। कृतघ्नः। हस्तिनं हन्तुं शक्तः=हस्तिघ्नः सिंहः। कपाटघ्नश्चौरः॥

उदा०—छन्दोगा एकश्रुत्या छन्दांसि गायन्ति=छन्दोग एकश्रुतिसे छन्दोंको गाते हैं। कृतघ्नस्य लोके निष्कृतिर्नास्ति=कृतघ्न का लोक में प्रायश्चित्त नहीं है॥

ड—अध्वानं गच्छति=अध्वगः पान्थः। दूरगः=अश्वः। पारगः=नाविकः। सर्वगः=ईश्वरः। उरसा गच्छति उरगः सर्पः। पन्नं पतितं गच्छतीति=पन्नगः सर्पः। विहायसा गच्छति विहगः=पक्षी। विहायसा को 'विह'

आदेश होगया है न—गच्छति=नगः पर्वतः। पङ्के जातम्=पङ्कजं कमलम्। सरसि जातं सरोजम्। मनसि जात=मनोजः कामः। बुद्धेः जातः=बुद्धिजः=विवेकः। संस्कारजः पुत्रः। आत्मनो जातः—आत्मजः=पुत्रः। अनु—पश्चाज्जातः=अनुजः=कनिष्ठभ्राता। अग्रे—जातः=अग्रजः=ज्येष्ठभ्राता। क्लेशं हन्ति= क्लेशापहः पुत्रः। तमोपहः=सूर्यः। न—जातः=अजः= आत्मा। द्विर्जातः=द्विजः=त्रैवर्णिकः॥

उदा०—अस्तं गते रवावध्वगाः विश्रामालयमाश्रयन्ते=सूर्य के अस्त होने पर पान्थ विश्रामालयका आश्रय लेते हैं। विषधरेणोरगेण दष्टः सद्यएव म्रियते=विषधर सर्प का डसा हुआ तत्कालही मरता है। यौवने मनोजः सर्वान् व्यथयति=युवावस्था में कामदेव सब को व्यथित करता है। क्लेशापहे पुत्रे जाते पित्रोः कामनासिद्धिर्जायते= क्लेशापह पुत्र के होने पर माता पिता की कामनासिद्धि होती है॥

डु—वि - विशेषेण भवति = विभुः व्यापकः। प्र—प्रकर्षेण भवति = प्रभुः स्वामी॥

उदा०—विभुना सर्वं व्याप्यते = विभुसे सब व्याप्त किया जाताहै। प्रभुणा वशं नीयतेऽनुचरवर्गः = स्वामी से अनुचरवर्ग वश में लाया जाता है॥

खश्—जनानेजयति = जनमेजयः = शूरः। अङ्गान्येजयति = अङ्गमेजयः = शीतः। प्रस्थं पचति = प्रस्थंपचः = कटाहः। मितंपचा = स्थाली। विधुं तुदति = विधु-

न्तुदः = राहुः । अरुन्तुदः = व्याधिः ॥ *

उदा०—यथा जनमेजयः शत्रून् व्यथयति तथैवाङ्गमेजयः दीनान् पीडयति = जैसे शूर शत्रुओं को व्यथित करता है, ऐसेही शीत दीनों को पीड़ित करता है। विधुन्तुदः सूर्यचन्द्रावेव ग्रसति = राहु सूर्य और चन्द्र कोही ग्रास करता है॥

खच्—प्रियं वदति प्रियंवदा = भार्या। वशंवदः = पुत्रः। द्विषन्तं तापयति = द्विषन्तपः। परान् तापयति = परन्तपः=शूरः। वाचं यच्छति = वाचंयमः = मितभाषी। पुरं दारयति=पुरंदरः। सर्वं सहति = सर्वंसहः = साधुः। मेघं करोति = मेघंकरः = वायुः। भयङ्करः = सिंहः = क्षेमंकरम् = पुण्यम्। प्रियंकरः = पुत्रः । विश्वं बिभर्त्ति = विश्वम्भरः=ईश्वरः। रथन्तरम् = साम। पतिंवरा = कन्या। शत्रुञ्जयः = योद्धा। युगन्धरः = पर्वतः । मन्युंसहः = धीरः। शत्रुन्तपः = वीरः। अरिन्दमः = शूरः॥ *

उदा०—यस्य प्रियंवदा भार्या वशंवदश्च पुत्रस्तस्येहैव स्वर्गः = जिसकी प्रियवादिनी स्त्री और अनुकूलवादी पुत्र है, उसको यहीं पर स्वर्ग है। परन्तपएव वाचंयमो भवति = शूरही वाणी को रोकने वाला होता है। शूराः विवेकिनश्च मन्युंसहा भवन्ति = शूर और ज्ञानी क्रोध को सहने वाले होते हैं॥

इन्—स्तम्बं स्तृणगुच्छं करोति = स्तम्बकरिः =

* जिन शब्दों के योग में खश् और खच् प्रत्यय होते हैं, उनको 'मुम्' का आगम होजाता है-'उम्' का लोप होकर 'म्' को अनुस्वर होजाता है॥

व्रीहिः । शकृत् पुरीषं करोति = शकृत्करिः = वत्सः । दृतिं चर्मपात्रं हरति = दृतिहरिः = पशुः । नाथं नासा रज्जुं हरति = नाथहरिः = पशुः । फलानि गृह्णाति । धारयतीति = फलेग्रहिः = फलवान् = वृक्षः । आत्मानं बिभर्त्ति = आत्मम्भरिः = कुक्षिम्भरिः = उदरम्भरिः = स्वोदरपूरकः ॥

उदा०—शकृत्करिः मातरमनुधावति = बालक माता के पीछे दौड़ता है । फलेग्रहिर्वृक्षः जनैः संरक्ष्यते = फलवान् वृक्ष मनुष्योंसे रक्षा किया जाताहै । आत्मम्भरिः स्वाश्रितान् नावेक्षते = पेटपाल अपने आश्रितों को नहीं देखता ॥

क्विप्—वेदं वेत्ति = वेदवित् = ब्राह्मणः । मित्रं द्वेष्टि=मित्रद्विट्=कृतघ्नः । वीरं सूते=वीर सूः=स्त्री । ब्रह्म हतवान्=ब्रह्महा = आततायी । भ्रूणहा । वृत्रहा । सुष्ठु कृतवान्=सुकृत्=सज्जनः । दिनकृत्=सूर्यः । मन्त्र कृत्=ऋषिः । पापकृत्=पापात्मा । पुण्यकृत्=पुण्यात्मा । शास्त्रकृत् । भाष्यकृत् । ग्रन्थकृत् । अग्निं चितवान्= अग्निचित्=याज्ञिकः । सोमं सूनवान्=सोमसुत्=दौहित्रः । विशेषेण राजति = विराट् । सम्राट् । परिव्राट् । प्र- अञ्चति = प्राङ् । प्रति- अञ्चति=प्रत्यङ् । उत्-अञ्चति= उदङ् । प्रति- अन्तरे भवति = प्रतिभूः=मध्यस्थः ।

उदा०—वेदविदेव विप्रः कृत्स्नं कर्मकाण्डं जानाति=वेदवित् ब्राह्मणही सम्पूर्ण कर्मकाण्ड को जानता है । हे राजन् ! तव पत्नी वीरसूः भूयात् = हे राजन् ! तुम्हारी स्त्री वीर को उत्पन्न करनेवाली हो ।

दिनकृतोदेत्यापहृतं नैशं तमः=सूर्यने उदित होकर रात्रि का अन्धकार दूर किया। अग्निचिता अग्निं सञ्चित्य यज्ञः समापितः=अग्निचित् ने अग्नि का सञ्चयन करके यज्ञ समाप्त किया॥

क्विन्—मर्म स्पृशतीति = मर्मस्पृक्=शरः। ऋतौ-यजति=ऋत्विक्=होता। तं पश्यति अनुकरोति=तादृक् =तैसा। यादृक् = जैसा। एतादृक्--ईदृक् = ऐसा। त्वामनुकरोति = त्वादृक् = तेरे जैसा। मादृक् = मेरे जैसा। भवादृक् = आप जैसा। अन्यादृक् = और जैसा॥

उदा०—मर्मस्पृशा वाक्शरेण कस्यापि हृदयं मा विध्येत्=मर्मस्पृक् वाणी के बाण से किसी के भी हृदय को मत बींधो। यादृक् त्वं तादृगेवाहम् = जैसा तू है वैसाही मैं हूं। भवादृशाः सज्जनाः सर्वत्र न लभ्याः= आप जैसे सज्जन सर्वत्र नहीं प्राप्त होते॥

क्वनिप्—पारं दृष्टवान् = पारदृश्वा। मेरुदृश्वा। राजानं योधितवान् = राजयुध्वा। राजकृत्वा। सह-युध्वा। सहकृत्वा॥*

उदा०—अस्माकमग्रजाः शास्त्राणां पारदृश्वानः = हमारे पूर्वज शास्त्रों के पारदर्शी थे।

तवत्—कृ- कृतमनेन = कृतवान्। गम्- गतवान्। श्रु- श्रुतवान्। भुज्- भुक्तवान्। पा- पीतवान्। दृश्- दृष्टवान्। स्था- स्थितवान्। हन्- हतवान्॥ इत्यादि*

उदा०—पुरा पठनार्थमहं वाराणसीं गतवान् =

* क्वनिप् और तवत् प्रत्यय भूतकाल में होते हैं।

पहिले पढ़ने के लिये मैं काशी को गया था। भीमः जरासन्धं हतवान् = भीम ने जरासन्ध को मारा था॥

क्वसु—कृ- चकारेति = चकृवान्। गम्- जग्मिवान्- जगन्वान्। श्रु- शुश्रुवान्। अद्- जक्षिवान्। पा- पपिवान्। दृश्- ददृशिवान्-ददृश्वान्। स्था- तस्थिवान्। हन्- जघ्निवान्- जघन्वान्। सद्- सेदिवान्। वच्- ऊचिवान्। वस्- ऊषिवान्। यज्- ईजिवान्। विश्- विविशिवान्- विविश्वान्। विन्द्- विविदिवान्- विविद्वान्। स्तु- तुष्टुवान्। सिच्- सिषिच्वान्॥ *

उदा०—चकृवान् विश्वमीश्वरः=ईश्वर ने विश्व को किया। जग्मिवान् जगन्वान् वा कृष्णः पाण्डवान्= कृष्ण पाण्डवों की ओर गया था। भीष्म मुखात् धर्मं शुश्रुवतः युधिष्ठिरस्य वैराग्यं जातम्=भीष्म के मुख से धर्म सुनते हुवे युधिष्ठिर को वैराग्य उत्पन्न हुवा। द्वारिकायामूषिवता कृष्णेन किं कृतम्=द्वारिका में बसते हुवे कृष्ण ने क्या किया? राजसूयमीजिवति युधिष्ठिरे कः प्रत्यवायो जातः=युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ करते हुवे कौन विघ्न हुआ?

कानच्—कृ- चकारेति चक्राणः। धृ- दधानः। युध्- युयुधानः। व्यथ्- विव्यथानः। सह्- सेहानः। शिक्ष्- शिशिक्षाणः। स्तु- तुष्टुवानः। ब्रू- ऊचानः। मुच्- मुमुचानः। यज्- सन्- कानच् = यियक्षमाणः॥ *

---

* क्वसु और कानच् दोनों 'लिट्' लकार के स्थान में होते हैं। इनमें से क्वसु परस्मैपद और कानच् आत्मनेपद कहलाता है

उदा०—युयुधानयोः कर्णार्जुनयोरर्जुनस्य जयो बभूव= कर्ण और अर्जुन के युद्ध करते हुवे अर्जुन का जय हुवा। विव्यथानोऽप्यभिमन्युः युद्धे पृष्ठं न ददौ = व्यथित होते हुवे भी अभिमन्यु ने युद्ध में पीठ न दी। व्यथां सेहानोऽपि भीष्मः युधिष्ठिरं शिक्षितवान् = पीड़ा को सहते हुवे भी भीष्म ने युधिष्ठिर को शिक्षा की। यियक्षमाणेनाहूतः पार्थेनाथ मुरं द्विषन् = यज्ञ करना चाहते हुवे युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को बुलाया था॥

शतृ—भू-भवतीति भवन्। कृ-कुर्वन्। गम्-गच्छन्। श्रु- शृण्वन्। स्था- तिष्ठन्। पा- पिबन्। दृश्- पश्यन्। सद्- सीदन्। हन्- घ्नन्। अस्- सन्। इ- यन्। विद्- विद्वान्- विदन्। हु- जुह्वन्। भी- बिभ्यन्। हा- जहन्। दिव्- दीव्यन्। जॄ - जीर्यन्। व्यध् - विध्यन्॥ *

उदा० - कार्यं कुर्वन् ग्रामं गच्छति = काम करता हुवा गांव को जाता है। गच्छन्तं पश्यन् तिष्ठति = जातेहुवेको देखता हुवा ठहरताहै। पङ्के सीदता हस्तिना चीत्कारितम् = कीचड़ में धसते हुवे हाथी ने चिंघाड़ा। घ्नते शत्रवे न कोऽपि क्षमां भजते = मारते हुवे शत्रु पर कोई क्षमा नहीं करता। यतोऽश्वात् पतति = जातेहुवे घोड़े से गिरता है। जुह्वतोऽपि होतुः स्पृष्टःसन् अग्निर्दहति = होम करते हुवे भी होताको स्पर्श करनेपर अग्नि जलाताहै। जीर्यति वयसि केयं विषयवासना = आयु के जीर्ण होने पर यह विषयवासना कैसी?

शानच्—कृ-करोतीति कुर्वाणः। गम्—गम्यमानः। श्रु—शृण्वानः। स्था—स्थीयमानः। पा—पीयमानः।

दृश्—दृश्यमाणः । सद्—सद्यमानः । हन्—निघ्नानः—हन्यमानः । अस्—भूयमानः । इ—ईयमानः । विद्—विद्यमानः । हु—हूयमाणः । भी—भीयमाणः—भीष्यमाणः । हा—हीयमानः । दिव्—दीव्यमानः । अस्—आसीनः । शी—शयानः । जॄ—जीर्यमाणः । व्यध्—विध्यमानः ॥ *

कुर्वाणो गच्छति = करताहुआ जाता है । गम्यमाणं श्रावयति = जातेहुवे को सुनाताहै । दृश्यमाणेनाभिहितम् = देखते हुवे ने कहा । आसद्यमानाय विप्राय ददाति = बैठे हुए ब्राह्मण को देता है । ईयमानाद्रथात् शस्त्रं प्रहिणोति = चलते हुवे रथसे शस्त्र छोड़ता है । हीयमानस्यार्थस्य को विश्वासः=जातेहुवे धनका क्या विश्वास? शयाने सति सर्वे मनोरथाः मनसि विलीयन्ते = सोनेपर सारे मनोरथ मन में विलीन होजाते हैं ॥

स्यतृ—कृ—करिष्यतीति = करिष्यन् । गम्—गमिष्यन् । श्रु—श्रोष्यन् । स्था—स्थास्यन् । पा—पास्यन्-दृश्—द्रक्ष्यन् । हन्—हनिष्यन् । इ—यास्यन् । विद्-वेत्स्यन् । भी—बिभेष्यन् ॥ इत्यादि *

उदा० — करिष्यन् गमिष्यति=करता हुवा जावेगा । गमिष्यन् श्रोष्यति = जाता हुवा सुनेगा । स्थास्यन्तं दर्शयिष्यति = ठहरे हुवे को दिखलावेगा ॥ इत्यादि

---

* शतृ और शानच् वर्तमान काल में होते हैं, इनमें से शतृ परस्मैपद और शानच् आत्मनेपद कहलाता है ॥

* स्यतृ और स्यमान दोनों भविष्यत् काल में होते हैं, इन में से स्यतृ परस्मैपद और स्यमान आत्मनेपद कहलाता है ।

स्यमान -कृ - करिष्यमाणः । गम् - गमिष्यमाणः । श्रु - श्रोष्यमाणः । स्था—स्थास्यमानः । पा-पास्यमानः । दृ—द्रक्ष्यमाणः । हन् - हनिष्यमाणः । इ - यास्यमानः । विद् - वेत्स्यमानः । भी - बिभेष्यमाणः ॥

उदाहरण स्यत्रन्त के समान जानो ॥

तुमुन्—धातुके आगे 'तुमुन्'प्रत्यय लगादेनेसे निमित्त अर्थका बोध होताहै, परन्तु उसके साथ क्रियार्था क्रिया का प्रयोग अवश्य होना चाहिए । भू - भवितुम् । गम्-गन्तुम् । श्रु - श्रोतुम् । वह् - वोढुम् । दृश् - द्रष्टुम् भुज् - भोक्तुम् । हन् - हन्तुम् । वच् - वक्तुम् । कृ - कर्त्तुम् । ग्रह् - ग्रहीतुम् । चित् - चिन्तयितुम् । कृ - णिच् - तुमुन् = कारयितुम् । कृ=सन् - तुमुन् = चिकीर्षितुम् ॥ इत्यादि

उदा०—सर्वे भवितुमिच्छन्ति = सब होना चाहते हैं । पान्थः गन्तुं यतते = पान्थ जाने को उद्यत है । श्रोता श्रोतुं वाञ्छति = श्रोता सुनना चाहता है । भारहारः वोढुं शक्नोति = मज़दूर ढोने को समर्थ है । चक्षुष्मान् द्रष्टुमीहते = आंखवाला देखना चाहता है । बुभुक्षितः भोक्तुं प्रक्रमते = भूखा खाने का आरम्भ करता है । आततायिनं हन्तुमर्हति = आततायी को मारना चाहताहै । वाग्मी वक्तुमारभते = वक्ता बोलना आरम्भ करता है । उत्साही कार्यं कर्त्तुं शक्नोति = उत्साही कार्य कर सकता है । स कस्मादपि ग्रहीतुं नेच्छति = वह किसी से भी लेना नहीं चाहता । गतं चिन्तयितुं नार्हसि = गये हुवे की चिन्ता करने को

योग्य नहीं है । स तैः कारयितुं शक्नोति = वह उनसे कराना सकता है । स कस्याप्यनिष्टं चिकीर्षितुं न शक्नोति = वह किसी का भी अनिष्ट करना चाहने को समर्थ नहीं है ॥

क्त्वा—जहां दो धातुओं का एकही कर्त्ता हो वहां पूर्वकाल में विद्यमान धातु से 'क्त्वा' प्रत्यय होता है—कृ- कृत्वा । गम्-गत्वा । श्रु- श्रुत्वा । स्था-स्थित्वा । पा- पीत्वा । दृश्- दृष्ट्वा । स्ना- स्नात्वा । हन्-हत्वा । भुज्- भुक्त्वा । विद्- विदित्वा । वच्- उक्त्वा । वस्- उषित्वा ॥

उदा०—कार्यं कृत्वोपरमते=कार्य करके विश्राम करता है । तत्र गत्वा तिष्ठति = वहां जाकर ठहरता है । स्नात्वा भुङ्क्ते = न्हाकर खाता है । भुक्त्वा व्रजति = खाकर जाताहै । दृष्ट्वा स्मयते = देखकर आश्चर्य करताहै ॥

ल्यप्—समास में यदि 'नञ्' पूर्व न हो तो 'क्त्वा' को 'ल्यप्' आदेश हो जाता है—अधि- कृ- त्वा = अधिकृत्य । आ- गम्- त्वा = आगम्य- आगत्य । सम्- श्रु- त्वा = संश्रुत्य । अधि- इ- त्वा = अधीत्य । प्र- इ- त्वा = प्रेत्य । आ- दा- त्वा = आदाय । वि- धा- त्वा = विधाय ॥ इत्यादि

उदा०—राजा प्रजास्वधिकृत्य वर्त्तते = राजा प्रजाओं में अधिकार करके रहता है । शिशुः गृहमागम्य आगत्य वा शेते = बालक घर में आकर सोता है । अधीत्य गच्छति = पढ़कर जाता है । प्रेत्य जायते = मर कर उत्पन्न होता है । पुस्तकमादाय गतः = पुस्तक

लेकर गया। स्वकृत्यं विधाय सुप्तः = अपना काम करके सोया॥

णमुल्—'क्त्वा' के अर्थ में ही 'णमुल्' प्रत्यय भी होता है—स्मृ- स्मारं स्मारम्। भुज्- भोजं भोजम्। कथम्- कृ = कथङ्कारम्। कन्या- दृश् = कन्यादर्शम्। यावत्- जीव् = यावज्जीवम्। उदर- पृ = उदरपूरम्। समूल- हन् = समूलघातम्। पाणि-ग्रह् = पाणिग्राहम्। चक्र- बन्ध् = चक्रबन्धम्। शय्या- उत्- स्था = शय्योत्थायम्। यष्टि- ग्रह् = यष्टिग्राहम्॥ इत्यादि

उदा०—स्मारं स्मारं पाठमधीते छात्रः = बार बार स्मरण करके छात्र पाठ पढ़ता है। भोजं भोजं धावति शिशुः = बार २ भोजन करके बालक दौड़ता है। यदि धनं नास्ति तर्हि कथङ्कारं निर्वाहो भविष्यति = यदि धन नहीं है तो कैसे करके निर्वाह होगा? कन्यादर्शं वरयति स्नातकः = ब्रह्मचारी कन्या को देखकर वरता है। यावज्जीवं परोपकुरुते साधुः = साधु यावज्जीवन परोपकार करता है। उदरपूरं भुङ्क्ते बुभुक्षितः = भूखा पेट भरकर खाता है। समूलघातं हन्ति राजा विद्रोहिणम् = राजा बागी को जड़ मूल से मारता है। पाणिग्राहं गृह्णाति = हाथ से ग्रहण करता है। चक्रबन्धं बन्धनाति शत्रुम् = चक्रव्यूहमें शत्रुको बान्धता है। शय्योत्थायं धावति ताडितः = ताड़न कियागया शय्या से उठकर दौड़ता है। यष्टिग्राहं युध्यन्ते मल्लाः = मल्ल यष्टि को पकड़कर युद्ध करते हैं॥ इत्यादि

इति सामान्यार्थकाः

२—अथ ताच्छील्यार्थकाः

अब ताच्छील्य अर्थ में जो कर्त्तृप्रत्यय होते हैं, उनका निरूपण करते हैं ॥

इष्णुच्—अलं करणं शीलमस्य=अलंकरिष्णुः । निराकरिष्णुः । प्रजनिष्णुः । उत्पचिष्णुः । उत्पतिष्णुः । उन्मदिष्णुः । रोचिष्णुः । अपत्रपिष्णुः । वर्त्तिष्णुः । वर्द्धिष्णुः । सहिष्णुः । चरिष्णुः । भविष्णुः ॥

उदा०—वाचोऽलंकरिष्णवः कवयः=कवि लोग वाणियों के अलङ्कार करने वाले होते हैं । अपत्रपिष्णुः निन्दितं न समाचरति=लज्जाशील निन्दित का आचरण नहीं करता । सहिष्णुः जगति प्रतिष्ठां लभते=सहनशील जगत् में प्रतिष्ठा पाता है ॥

ग्स्नु—जेतुं शीलमस्य=जिष्णुः । ग्लास्नुः । स्थास्नुः । भूष्णुः ॥

उदा०—जिष्णुः परकृतामवज्ञां न सहते=जयनशील दूसरे की की हुई अवज्ञाको नहीं सहता । भूष्णुना कदाप्यधर्मो नाद्रियते=भवनशील से कभी अधर्म का आदर नहीं किया जाता ॥

क्नु—त्रसितुं शीलमस्य=त्रस्नुः । गृध्नुः । धृष्णुः । क्षिप्नुः ॥

उदा०—सेनापतिना त्रस्नवो युद्धे न प्रेष्यन्ते=सेनापतिसे डरपोक युद्धमें नहीं भेजे जाते । धृष्णवो वर्जिता अपि धार्ष्ट्यं न जहति=धृष्ट लोग रोके हुवे भी धृष्टता को नहीं छोड़ते ॥

घिनुण्—शमितुं शीलमस्य=शमी। दमी। श्रमी। जयी। क्षयी। अत्ययी। प्रसवी। संपर्की। अनुरोधी। आयामी। संसर्गी। परिवादी। अपराधी। दोषी। द्वेषी। द्रोही। योगी। विवेकी। त्यागी। रागी। भागी। विलासी। विकत्थी। विस्रम्भी। प्रलापी। प्रमाथी। प्रवादी। प्रवासी॥

उदा०—श्रमी सदा सुखमनुभवति=श्रमी सदा सुखका अनुभव करता है। व्यायामी रोगैर्नाभिभूयते=व्यायामी रोगों से नहीं सताया जाता। संसर्गी दोषैर्लिप्यते= संसर्गी दोषों से लिप्त होता है। परद्रोही विनश्यति= परद्रोही नष्ट होजाता है। विवेकिनोऽस्मिन् संसारे न रज्यन्ते=ज्ञानी पुरुष इस संसार में अनुराग नहीं करते। रागिणो जनाः भवाब्धौ निमज्जन्ति=रागी पुरुष संसार सागर में डूबते हैं। ये विस्रम्भिभिःसह विश्वासघातं कुर्वन्ति तान् धिक्=जो विश्वासियों के साथ विश्वास-घात करते हैं, उनको धिक्कार है।

वुञ्—निन्दितुं शीलमस्य=निन्दकः। हिंसकः। क्लेशकः। खादकः। विनाशकः। परिक्षेपकः। परिवादकः। असूयकः। परिदेवकः। आक्रोशकः॥ इत्यादि

उदा०—निन्दकैः परगुणेषु दोषारोपणं क्रियते= निन्दकों से पराये गुणों में दोषारोपण किया जाता है। हिंसकाः हिंसाजन्यपापेन युज्यन्ते=हिंसक हिंसाजन्य पाप से युक्त होते हैं। परिदेवकैः परिदेवनं क्रियते= दुःखियों से विलाप किया जाता है॥

युच्—चलितुं शीलमस्य=चलनः । शब्दनः । वर्द्धनः । जवनः । चङ्क्रमणः । दन्द्रमणः । सरणः । गर्द्धनः । ज्वलनः । लषणः । पतनः । क्रोधनः । रोषणः । मण्डनः । भूषणः ॥

उदा०—चलनः तृणानि नोन्मूलयति=वायु तृणों को नहीं उखाड़ता । जवनो मनः क्षणात् दूरमभ्युपैति=वेगवाला मन क्षण में दूर पहुंचता है । चङ्क्रमणोऽश्वः प्रशस्तो भवति=कदम चलने वाला घोड़ा अच्छा होता है । गर्द्धनो जनः लोके निन्दां लभते=लोभी जन लोक में निन्दा पाता है । ज्वलनः सर्वान् पदार्थान् भस्मसात् कुरुते=अग्नि सब पदार्थों को भस्मसात् करता है । क्रोधन आश्वासितोऽपि शान्तिं न भजते=क्रोधी समझाया हुआ भी शान्ति को नहीं सेवन करता ॥

उकञ्—अभिलषितुं शीलमस्य=अभिलाषुकः । प्रपातुकः । उपपादुकः । स्थायुकः । भावुकः । प्रवर्षुकः । आघातुकः । कामुकः । आगामुकः । शारुकः ॥

उदा०—विद्याभिलाषुकः श्रद्धया गुरुं सेवते=विद्याभिलाषी श्रद्धा से गुरु की सेवा करता है । भावुको जनः सद्वृत्तमाश्रयते=होनहार पुरुष सदाचारका आश्रय करता है । कामुकस्य राज्येनाऽपि तुष्टिर्न भवति=कामनाशील की राज्य से भी तृप्ति नहीं होती ॥

षाकन्—जल्पितुं शीलमस्य=जल्पाकः । भिक्षाकः । कुट्टाकः । वराकः ।

उदा०—जल्पाको वाचं दुरुपयुङ्क्ते=बहुत बोलने वाला वाणी का दुरुपयोग करता है । भिक्षाकः सर्व-

ग्रामवञ्चाभाजनो भवति=भीख मांगने वाला सब का अवज्ञास्पद होता है। वराकः स्वहितैषिणमपि द्वेष्टि=मूर्ख अपने हितैषी से भी द्वेष करता है॥

आलुच्—स्पर्द्धितुं शीलमस्य=स्पृहयालुः। गृहयालुः। पतयालुः। दयालुः। निद्रालुः। तन्द्रालुः। श्रद्धालुः। शयालुः

उदा०—स्पृहयालुः परोदयं न सहते=स्पर्द्धाशील दूसरे के उदय को नहीं सहता। दयालुः दीनानुद्धरते=दयाशील दीनों का उद्धार करता है। श्रद्धालुः विपद्गतोऽपि धर्मं नातिवर्त्तते=श्रद्धालु विपत्ति को प्राप्त हुवा भी धर्म का अतिक्रमण नहीं करता॥

रु-दातुं शीलमस्य=दारुः। धारुः। सेरुः। शद्रुः। सद्रुः॥

उदा०—दारुः सदा पात्रमपेक्षते=दानशील सदा पात्र की अपेक्षा करता है। सेरुः पशुर्बन्धनान्मुक्तोऽपि गृह एव प्रविशति=बन्धनशील पशु बन्धन से छूटा हुवा भी घर में ही प्रवेश करताहै। सद्रुराश्वासितोऽपि विषादं न जहाति=विषादशील समझाया हुवा भी विषाद को नहीं छोड़ता॥

क्मरच्—सर्त्तुं शीलमस्य=सृमरः। घस्मरः। अद्मरः॥ सृमरो वायुः केनापि नावरुध्यते=गमनशील वायु किसी से भी नहीं रोका जाता। अद्मरो मनुष्यः भक्ष्याभक्ष्यं नावेक्षते=भक्षणशील मनुष्य भक्ष्याभक्ष्यको नहीं देखता॥

घुरच्—भङ्क्तुं शीलमस्य=भंगुरः। भासुरः। मेदुरः॥

उदा०—भंगुरे देहे को विश्वासः=भञ्जनशील देह में क्या विश्वास है? भास्करस्य भासुरं ज्योतिः प्रकाशते=सूर्यकी प्रकाशशील ज्योति प्रकाशित होती है।

कुरच्—वेत्तुं शीलमस्य=विदुरः। भिदुरः। छिदुरः॥

उदा०—विदुरो बुद्धिबलेनानुक्तमनागतञ्चापि जानाति = पण्डित बुद्धि के बल से अनुक्त और अनागत को भी जान लेता है। कुठारेण भिदुरं काष्ठं भिद्यते = कुठार से भेदनशील काष्ठ भेदन किया जाता है। छिदुरया रज्वा कूपे छिद्राणि सम्पद्यन्ते = छेदनशील रस्सी से कुवें में गढ़े होजाते हैं॥

क्वरप्—एतुं शीलमस्य = इत्वरः। नश्वरः। जित्वरः। सृत्वरः। गत्वरः॥

उदा०—इत्वरोऽश्वः स्वामिनं दूरं गमयति = गमन शील घोड़ा स्वामी को दूर लेजाता है। नश्वरेण देहेनाविनश्वरा कीर्त्तिरुपार्जनीया = नाशशील देह से न नाश होनेवाली कीर्त्ति उपार्जन करनी चाहिये। जित्वरैः शूरैः आहवाग्नौ प्राणाहुतयो हूयन्ते=जयन शील शूरों से युद्ध रूपी अग्नि में प्राण की आहुतियां दीजाती हैं। सृत्वरी लता पार्श्वस्थं वृक्षं परिवेष्टयति=सरणशील लता समीपस्थ वृक्ष को लपेटती है। गत्वरः पान्थः निर्दिष्टं देशं समधिगच्छति=गमन शील पान्थ निर्दिष्ट देश को प्राप्त होता है॥

ऊक—जागरितुं शीलमस्य=जागरूकः। पुनः पुनरतिशयेन वा यष्टुं शीलमस्य=यायजूकः। वावदूकः॥

उदा०—जागरूकेभ्यश्चौराः पलायन्ते=जागरणशीलों से चोर भागते हैं। यायजूका इष्टिभिर्यजन्ते=वारवार यजनशील इष्टियों से यजन करते हैं। वावदूकेन कदा-

चिदपि मौनं नाश्रीयते=वावदूक से कभी चुप नहीं रहा जाता ॥

र—नमितुं शीलमस्य = नम्रः । कम्प्रः । स्मेरः । कम्रः । हिंस्रः । दीप्रः ॥

उदा०—महत्त्वं प्राप्य सज्जना नम्रा भवन्ति = महत्त्व को पाकर सज्जन नम्र होते हैं । कम्प्रा शाखा वायुना मुहुर्मुहुर्नमति = कम्पनशील शाखा वायु से वारवार लचती है । स्मेरं मुखं सर्वदा शोभते = हंसने वाला मुख सदा शोभा पाता है । राज्ञा हिंस्रेभ्यो दीना रक्षणीया । राजा को हिंसकों से दीनों की रक्षा करनी चाहिये ॥

उ—चिकीर्षितुं शीलमस्य = चिकीर्षुः । जिज्ञासुः । जिगमिषुः । पिपासुः । जिहासुः । जिघृक्षुः । बुभुक्षुः । दित्सुः । लिप्सुः । आशंसितुं शीलमस्य = आशंसुः । भिक्षुः । वेदितुं शीलमस्य = विन्दुः । एषितुं शीलमस्य = इच्छुः ॥

उदा०—ये लोकहितं चिकीर्षवस्त एव सज्जनाः = जो संसार का हित करने की इच्छा करते हैं वे ही सज्जन हैं । जिज्ञासुना प्रश्नावसरे मत्सरो न कार्यः = जिज्ञासु ने प्रश्न के समय मत्सर नहीं करना चाहिये । पिपासवे जलं दातव्यम् = प्यासे के लिये जल देना चाहिये । जिघृक्षुणा प्रतिग्रहस्य फल्गुता न ज्ञायते = ग्रहणशील से प्रतिग्रह की असारता नहीं जानी जाती । दित्सुः कदापि कार्पण्यं न भजते=दानशील कभी कृपणता का सेवन नहीं करता । भिक्षुः गृहस्थेभ्यो याचते=भिक्षु

गृहस्थों से याचना करता है। भूतिमिच्छवो धर्ममाचरन्ति = उन्नति चाहनेवाले धर्म का आचरण करते हैं॥

नजिङ्—स्वप्तुं शीलमस्य = स्वप्नक्। तर्षितुं शीलमस्य = तृष्णक्। धृष्णक्॥

उदा०—स्वप्नक् जागरितोऽपि शेते = शयनशील जागता हुवा भी सोता है। तृष्णक् शान्तिं न लभते = तृष्णाशील शान्ति को नहीं पाता॥

आरुः—शरितुं शरीतुं वा शीलमस्य = शरारुः। वन्दितुं शीलमस्य = वन्दारुः॥

उदा०—शरारुर्निर्दयो भवति = हिंसाशील निर्दय होता है। वन्दारुर्वृद्धानभिवादयते = वन्दनशील वृद्धों को अभिवादन करता है॥

क्रु-क्रुकन्—भेतुं शीलमस्य = भीरुः- भीरुकः।

उदा०—भीरुणा भीरुकेण वा संग्रामे न स्थीयते= डरपोक से युद्ध में नहीं ठहरा जाता॥

वरच्—स्थातुं शीलमस्य=स्थावरः। ईशितुं शीलमस्य =ईश्वरः। भासितुं शीलमस्य=भास्वरः। पुनः पुनरतिशयेन वा यातुं शीलमस्य=यायावरः॥

उदा०—स्थावरः स्वस्थानान्न चलति=स्थावर अपनी जगह से नहीं चलता। ईश्वरस्य सत्ता सर्वत्र वर्त्तते= ईश्वर की सत्ता सर्वत्र वर्त्तमान है॥ यायावरः स्थावरानत्येति=अत्यन्त गमनशील स्थितिशीलों का अतिक्रमण करता है॥

क्विप्—विभ्राजितुं शीलमस्य=विभ्राट्। विद्योतितुं

शीलमस्याः=विद्युत् । वक्तुं शीलमस्याः=वाक् । अतिशयेन गन्तुं शील मस्य=जगत् । ध्यातुं शीलमस्याः = धीः । श्रयितुं शीलमस्याः=श्रीः । भवितुं शीलमस्याः=भूः ॥

उदा०—घनेषु विद्योतते विद्युत्=बादलों में बिजली चमकती है । परिवर्त्तिनि जगति कोऽपि स्थैर्यं न लभते =परिवर्त्तनशील जगत् में कोई भी स्थिरता को नहीं पाता । उद्योगिनं पुरुषं श्रीः समाश्रयते = उद्योगी पुरुष का लक्ष्मी आश्रय लेती है ।

इति ताच्छील्यार्थकाः
समाप्तश्च कृदन्तप्रकरणम् ।

——:o:——

अथ तद्धितप्रकरणम् ।

परस्पर सापेक्ष शब्दोंसे किन्ही विशेष अर्थों में जो प्रत्यय होते हैं, उनको तद्धित कहते हैं । यथा—उपगोरपत्यम् = औपगवः । उपगुकापुत्र = औपगव कहलाताहै

अनपेक्ष पदों से तद्धित प्रत्यय नहीं होते । जैसे— कम्बल उपगोः, अपत्यं वसिष्ठस्य = कम्बल उपगु का, पुत्र वसिष्ठ का । यहां 'उपगु' शब्द के साथ अपत्य शब्द की अपेक्षा नहीं है ॥

यह भी नियम है कि परस्पर सापेक्ष पदों में जो पहिला पद होता है उसीसे तद्धित प्रत्यय होतेहैं,अन्यों से नहीं जैसे—अश्वपतेरपत्यम् = आश्वपतम् । यहां पर

पूर्वपद 'अश्वपति' से ही तद्धित 'अण्' प्रत्यय होता है नकि उत्तरपद अपत्य से ॥

कृदन्त शब्दों के समान तद्धितान्त शब्द भी प्रथमादि सात विभक्तियों, एकवचनादि तीन वचनों और पुंल्लिङ्गादि तीन लिङ्गों में परिणत होते हैं ॥

तद्धित में जो प्रत्यय होते हैं, उनके आदि में यदि षकार, चवर्ग और टवर्ग हों तौ उनका लोप होजाता है और अन्त्य के हल् का भी सर्वत्र लोप होता है ॥

यदि किसी प्रत्यय के अङ्ग 'यु' और 'वु' हों तौ उनको क्रम से 'अन' और 'अक' आदेश होजाते हैं ॥

यदि किसी प्रत्यय की आदि में ठ, फ, ढ, ख, छ, और घ ये वर्ण हों तौ उनको क्रमशः इक्, आयन्, एय्, ईन्, ईय्, और इय् आदेश होजाते हैं ॥

जिन प्रत्ययों के ञ्, ण् और क् का लोप हुवा हो उनके पूर्वपदस्थ शब्द का जो आदि अच् है उसको वृद्धि होजाती है ॥

तद्धितप्रकरणको पढ़नेवाले उक्त नियमोंपर ध्यान रक्खें ॥

तद्धित तीन प्रकार का है १—सामान्य वृत्ति २—भाववाचक ३—अव्ययसंज्ञक ॥

१—अथ सामान्यवृत्तिः

सामान्यवृत्ति तद्धितके ९ विभागहैं, जिन के नाम ये हैं—

(१) अपत्यार्थक (२)देवतार्थक (३) सामूहिक (४)अध्ययनार्थक (५) शैषिक(६) विकारावयवार्थक (७) अनेकार्थक (८) मतुबर्थक (९) स्वार्थिक। अब इन में जिस २ दशा में

जो २ प्रत्यय होतेहैं, उनको हम क्रमशः उदाहरणपूर्वक दिखलाते हैं ॥

१—अपत्यार्थकाः

अपत्य के तीन भेद हैं (१) अपत्य (२) गोत्रापत्य (३) युवापत्य ॥

जो अपने से विना व्यवधान के उत्पन्न हों, ऐसे पुत्रादि की अपत्य संज्ञा है। जो अपत्य से उत्पन्न हों, ऐसे पौत्रादिकी गोत्रापत्य संज्ञा है और जो पिता आदि जीवित हों तो पौत्र के पुत्रादि की युवापत्य संज्ञा है। इन्हीं तीन अर्थों में अपत्यार्थक प्रत्यय होते हैं ॥

गोत्रापत्य में एकही प्रत्यय होता है, अर्थात् पौत्र के पश्चात् फिर अपत्यार्थक प्रत्यय नहीं होता। जैसे— गर्ग शब्द से गोत्रापत्य में 'यञ्' होकर 'गार्ग्यः' बना, अब इससे फिर कोई अपत्यार्थक प्रत्यय न होगा, किन्तु गार्ग्य के पुत्र और पौत्र भी गार्ग्य ही कहलावेंगे ॥

युवापत्य में केवल गोत्र प्रत्ययान्त शब्द सेही प्रत्यय होता है, अन्य से नहीं। यथा—गार्ग्यस्य युवापत्यम् = गार्ग्यायणः। गर्ग शब्दसे गोत्रापत्यमें 'यञ्' प्रत्यय होकर 'गार्ग्यः' बना था, अब उससे युवापत्य में 'फक्' प्रत्यय होकर "गार्ग्यायणः" बनगया ॥

अब अपत्यार्थ में जिन २ शब्दों से जो २ प्रत्यय होते हैं, उनको दिखलाते हैं—

अण्

शिवादिगणपठित शब्दों से अपत्यार्थ में 'अण्' प्रत्यय होता है—शिवस्यापत्यम् = शैवः। काकुत्स्थः। हैहयः। वैश्रवणः। आर्ष्टिषेणः। गाङ्गः। यास्कः। भौमः।

ऐलः । सापत्नः । इत्यादि । आदि के अच् को वृद्धि होजाती है ॥

अश्वपति आदि शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है—अश्वपतेरपत्यम्=आश्वपतम्=शातपतम् । गाणपतम् । कौलपतम् । पाशुपतम् । इत्यादि ॥

जिनके अचों में वृद्धि न हुई हो ऐसे नदी और मानुषी के नामों से भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है । नदी—यमुनाया अपत्यम् = यामुनः । ऐरावतः । वैतस्तः । नार्मदः ॥ मानुषी—शिक्षिताया अपत्यम् = शैक्षितः । चैन्तितः ॥ इत्यादि

ऋषि, अन्धक, वृष्णि, और कुरु इनके वाचक शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है ऋषि—वसिष्ठस्यापत्यम् = वासिष्ठः । वैश्वामित्रः ॥ अन्धक—श्वाफल्कः । वृष्णि—वासुदेवः । आनिरुद्धः ॥ कुरु—नाकुलः । साहदेवः ॥ ऋषि मन्त्र द्रष्टाओं का और अन्धक, वृष्णि और कुरु ये वंशों के नाम हैं ॥*

---

* शब्द नित्य हैं ऐसा भाष्यकार का मत है, फिर अन्धक, वृष्णि और कुरु इन अनित्य वंशोंका आश्रय लेकर क्यों उनका व्याख्यान किया गया ? इसका उत्तर यह है कि वास्तव में शब्द नित्य और असंख्य हैं । यदि इन वंशादि वाच्यों के होने से पूर्व इनके वाचक शब्द न होते तो इनके ये नामही कैसे रक्खे जाते ? जैसे अब कोई अपने पुत्रका वासुदेव नाम रक्खे तो क्या इससे यह सिद्ध होसक्ता है कि उसने वासुदेव संज्ञा को बनाया ? कदापि नहीं । किन्तु यही माना जायगा कि उस से बनी बनाई संज्ञा को लेकर अपना काम चलाया । ऐसेही कुरु आदि शब्दों की व्यवस्था भी समझो, इससे इनमें अनित्यता का दोष नहीं आसक्ता ।

संख्यावाचक तथा सम् और भद्र शब्द पूर्व हों तो मातृ शब्दसे भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है- द्विमात्रो-रपत्यम्=द्वैमातुरः। षाण्मातुरः। सांमातुरः। भाद्रमातुरः॥

कन्या शब्द से भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है और उसके योग से कन्या शब्द को 'कनीन' आदेश भी हो जाता है-कन्याया अपत्यम्=कानीनः। कन्या=अनूढ़ा से जो उत्पन्न हो वह कानीन कहलाता है॥

मनु शब्द से भी अपत्यार्थ में 'अण्' होता है-मनोरपत्यम्=मानवः॥*

जनपद (नगर) वाचक दो अच् वाले शब्द तथा मगध, कलिङ्ग और सूरमस् शब्दों से यदि वे क्षत्रिय के अभिधायक हों तो अपत्यार्थ में 'अण्' होता है- अङ्ग-स्यापत्यम्=आङ्गः। वाङ्गः। पौण्ड्रः। मागधः। कालिङ्गः। सौरमसः॥ क्षत्रियसे अन्यत्र- आङ्गिः। वाङ्गिः। इत्यादि वक्ष्यमाण 'इञ्' होगा॥

अञ्

उत्स आदि शब्दों से अपत्यार्थ में 'अञ्' होता है-उत्सस्यापत्यम्=औत्सः। पार्थिवः। पाङ्क्तः। भारतः। औशीनरः। पैलः। वार्ष्टतः। सात्वतः। कौरवः। पाञ्चालः†

* मनु शब्द से केवल अपत्यार्थ में 'अण्' होता है, यदि जाति अभिधेय हो तो अञ् और यत् प्रत्यय होते हैं-मनोरप-त्यं जातिश्चेत्=मानुषः। मनुष्यः। दोनों में षुक् का आगम होजाता है।

† अण् और अञ् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप एकजैसेही होते हैं केवल स्वर में कुछ भेद होता है॥

विदादि शब्दों से गोत्रापत्य में (अञ्) होता है-विदस्य गोत्रापत्यम्=वैदः । काश्यपः। कौशिकः। भारद्वाजः। औपमन्यवः । वैश्वानरः । आर्ष्टिषेणः। शारद्वतः। शौनकः। पौनर्भवः । पौत्रः । दौहित्रः ॥

जनपद [नगर] वाचक शब्दों से यदि वे क्षत्रिय के अभिधायक हों तो अपत्यार्थमें 'अञ्' होता है—पञ्चालस्यापत्यम्=पाञ्चालः । वैदेहः । गान्धारः । इत्यादि ॥ दो अच् वाले शब्दोंसे 'अण्' विधान कर चुके हैं । क्षत्रिय से अन्यत्र--पाञ्चालिः । इत्यादि 'इञ्' होगा ॥

कम्बोज, चोल, केरल, शक और यवन शब्दों से अपत्यार्थ में 'अञ्' होकर उसका लोप होजाता है—कम्बोजस्यापत्यम्=कम्बोजः। चोलः । केरलः । शकः। यवनः॥

इञ्

अकारान्त शब्दों से अपत्यार्थमें 'इञ्' प्रत्यय होता है—दक्षस्यापत्यम्=दाक्षिः । दाशरथिः । द्रौणिः ।

बाहु आदि शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'इञ्' होता है - बाहोरपत्यम्=बाहविः। बालाकिः। सौमित्रिः। कार्ष्णिः । यौधिष्ठिरिः । आर्जुनिः ।

सुधातु, व्यास, वरुड़, निषाद, चण्डाल और बिम्ब शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'इञ्' और उससे पूर्व इनको 'अक' आदेश भी होता है—सौधातकिः । वैयासकिः । वारुडकिः । नैषादकिः । चाण्डालकिः । बैम्बकिः ॥

शिल्पवाचक, लक्षण और सेना शब्द जिनके अन्त में हों ऐसे शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'इञ्' होता है—

शिल्पवाचक—कौम्भकारिः। तान्तुवायिः। लक्षण—लाक्षणिः। सेनान्त—कारिषेणिः। शौरसेनिः॥

ण्य

शिल्प, लक्षण और सेना शब्दान्त से 'ण्य' प्रत्यय भी होता है—कौम्भकार्यः। तान्तुवाय्यः। लाक्षण्यः। कारिषेण्यः। शौरसेन्यः॥

दिति, अदिति और पत्यन्त शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'ण्य' प्रत्यय होता है—दितेरपत्यम्=दैत्यः। आदित्यः। प्राजापत्यः॥

क्षत्रियवाचक कुरु और नकारादि शब्दों से भी अपत्यार्थमें 'ण्य' प्रत्यय होताहै – कुरोरपत्यम्=कौरव्यः। नैषध्यः। नैपथ्यः॥ इत्यादि

यञ्

गर्गादि गणपठित शब्दों से गोत्रापत्य में 'यञ्' प्रत्यय होताहै—गर्गस्य गोत्रापत्यम्=गार्ग्यः। वात्स्यः। आगस्त्यः। पौलस्त्यः। धौम्यः। बाभ्रव्यः। माण्डव्यः। काण्वः। शाकल्यः। कौण्डिन्यः। याज्ञवल्क्यः। शाण्डिल्यः। मौद्गल्यः। पाराशर्यः। जातूकर्ण्यः। आश्मरथ्यः। पैङ्गल्यः। दाल्भ्यः। जामदग्न्यः। इत्यादि

फक्—फञ्—फिञ्

नडादि शब्दों से गोत्रापत्य में फक् प्रत्यय होता है 'फ्' को 'आयन्' आदेश होकर-नडस्य गोत्रापत्यम्=नाडायनः। चारायणः। नारायणः। मैत्रायणः। शाकटायनः। इत्यादि

यञन्त और इञन्त शब्दों से युवापत्य में 'फक्' प्रत्यय होता है । यञन्त—गार्ग्यस्य युवापत्यम्=गार्ग्यायणः । वात्स्यायनः । इत्यादि इञन्त—दाक्षेः युवापत्यम्=दाक्षायणः । प्लाक्षायणः । इत्यादि

द्रोण, पर्वत और जीवन्त शब्दों से गोत्रापत्य में विकल्प से 'फक्' होता है, पक्ष में इञ् होता है—द्रौणायनः । द्रौणिः । पार्वतायनः । पार्वतिः । जैवन्तायनः । जैवन्तिः ॥

अश्वादि गणपठित शब्दों से गोत्रापत्य में 'फञ्' होता है - आश्वायनः । आश्मायनः । इ०

तिकादि गणपठित शब्दों से अपत्यार्थ में 'फिञ्' प्रत्यय होताहै - तिकस्यापत्यम्=तैकायनिः । कैतवायनिः

दो अच् वाले अणन्त से भी अपत्यार्थ में 'फिञ्' होता है—कर्त्तुरपत्यम्=कार्त्रः । कार्त्रस्यापत्यम्=कार्त्रायणिः । हार्त्रायणिः । इ०

तद् आदि सर्वनामों से भी अपत्यार्थ में 'फिञ्' होता है—तस्यापत्यम्=तादायनिः । यस्यापत्यम्=यादायनिः । इ०

ढक्—ढञ्

स्त्री प्रत्ययान्त आबन्त शब्दों से अपत्यार्थमें 'ढक्' प्रत्यय होताहै—विनताया अपत्यम्=वैनतेयः । गाङ्गेयः । सारमेयः । मैत्रेयः । इत्यादि 'ढ' को 'एय्' आदेश होकर वृद्धि होजाती है ॥

दो अच् वाले पुंलिङ्ग इकारान्त शब्दों से भी यदि

वे 'इञ्' प्रत्ययान्त न हों तो अपत्यार्थ में 'ढक्' होता है- अत्रेरपत्यम्=आत्रेयः। नैधेयः। इ०

शुभ्रादि गणपठित शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'ढक्' होता है – शौभ्रेयः। गौधेयः। काद्रवेयः। कौमारिकेयः। आम्बिकेयः। इ०

विकर्ण और कुषीतक शब्दों से यदि ये दोनों कश्यप के अपत्यविशेष हों तो 'ढक्' होता है; अन्यथा इञ्—वैकर्णेयः। कौषीतकेयः। काश्यप से भिन्न—वैकर्णिः। कौषीतकिः॥

कुलटा शब्द से भी अपत्यार्थ में 'ढक्' होता है - कुलटाया अपत्यम्=कौलटेयः। किन्हीं के मत से 'इन्' आदेश होकर – कौलटिनेयः। भी होता है॥

पितृष्वसृ और मातृष्वसृ शब्दों से भी अपत्यार्थ में 'ढक्' होताहै- पितृष्वसुरपत्यम्=पैतृष्वसेयः। मातृष्वसेयः

गृष्ट्यादि गणपठित शब्दों से अपत्यार्थ में 'ढञ्' प्रत्यय होता है—गृष्टेरपत्यम्=गार्ष्टेयः। हार्ष्टेयः। हालेयः। बालेयः। इ०

छ—छण्

स्वसृ और भ्रातृ शब्दों से अपत्यार्थ में (छ) प्रत्यय होता है – स्वसुरपत्यम्=स्वस्रीयः। भ्रात्रीयः। 'छ' को (ईय्) आदेश होजाता है। भ्रातृ शब्द से अपत्यार्थमें (व्यत्) प्रत्यय भी होता है – भ्रातुरपत्यं भ्रातृव्यः॥

पितृष्वसृ और मातृष्वसृ शब्दोंसे अपत्यार्थमें 'छण्' भी होता है – पैतृष्वस्रीयः। मातृष्वस्रीयः॥

यत्

राजन् और श्वशुर शब्द से अपत्यार्थ में यत् प्रत्यय होता है- राज्ञोऽपत्यम्=राजन्यः । * श्वशुर्यः ॥

घ

'क्षत्र' शब्द से अपत्यार्थ में (घ) प्रत्यय होता है- क्षत्रस्यापत्यम्=क्षत्रियः । * 'घ' को (इय्) आदेश होजाता है ॥

ख—खञ्

कुल शब्द जिसके अन्त में हो ऐसे पद से अपत्यार्थ में (ख) प्रत्यय होताहै । (ख) को (ईन्) आदेश होकर—आढ्यकुलीनः । श्रोत्रियकुलीनः ॥

केवल कुल शब्द से अपत्यार्थ में खञ्, यत् और ढकञ् तीन प्रत्यय होतेहैं—कुलीनः । कुल्यः । कौलेयकः॥

महाकुल शब्द से खञ् और अञ् तथा दुष्कुल शब्द से खञ् और ढक् प्रत्यय यथाक्रम होते हैं—महाकुलीनः । माहाकुलः । दुष्कुलीनः । दौष्कुलेयः ॥

ठक्—ण

रेवत्यादि गणपठित शब्दों से अपत्यार्थ में 'ठक्' प्रत्यय होता है, 'ठ' को 'इक्' होकर—रेवत्या अपत्यम्=रैवतिकः । आश्वपालिकः । इ०

गोत्रवाचक स्त्रीलिङ्ग शब्दोंसे अपत्यार्थ में निन्दा सूचित होती हो तो ठक् और ण प्रत्यय होते हैं ।

*राजन् और क्षत्र शब्दसे क्रमशः यत् और घ प्रत्यय जाति के अभिधान में होते हैं, जाति से अन्यत्र राजन् से अण् और क्षत्र से इञ् प्रत्यय होंगे—राजनः । क्षात्रिः ॥

पिता का ज्ञान न होने पर माता के नाम से जो पुत्र का व्यपदेश किया जाता है, वह पुत्र की एक प्रकार की निन्दा है—गार्ग्या अपत्यम्=गार्गिकः । गार्गः ॥ जाबालिकः । जाबालः । इ०

२—देवतार्थकाः

प्रथमान्त देवतावाचक शब्दों से षष्ठी के अर्थ में हव्य और सूक्तके अभिधानमें देवतार्थक प्रत्यय होतेहैं ।

अण्—इन्द्रादि शब्दों से देवतार्थक अण् प्रत्यय होता है- इन्द्रो देवताऽस्य=ऐन्द्रं हविः सूक्तं वा=इन्द्र देवता के उद्देश से जो हविस् दियाजाय वा सूक्त पढ़ा जाय उस हविस् वा सूक्त को 'ऐन्द्र' कहते हैं। ऐसेही वारुणम् । बार्हस्पतम् । कः प्रजापतिर्देवताऽस्य=कायं हविः सूक्तं वा । 'अण्' होकर 'क' को इकारादेश भी होताहै ।

घन्—शुक्रो देवताऽस्य=शुक्रियं हविः सूक्तं वा ॥

घन्-छ—शतं रुद्रा देवता अस्य=शतरुद्रियम्- शतरुद्रीयम् । अपोनप्त्रियम्- अपोनप्त्रीयम् । अपान्नप्त्रियम्- अपान्नप्त्रीयम् ।

ट्यण्- सोमो देवताऽस्य = सौम्यम् ।

अण्- घ- छ—महेन्द्रो देवताऽस्य=माहेन्द्रम्- महेन्द्रियम्- माहेन्द्रीयम् ॥

यत्—वायुर्देवताऽस्य=वायव्यम् । ऋतव्यम् । पित्र्यम् । उषस्यम् ।

छ-यत—द्यावापृथिव्यौ देवते अस्य=द्यावापृथिवीयम्- द्यावापृथिव्यम् । शुनासीरीयम्- शुनासीर्यम् । मरुत्वतीयम्- मरुत्वत्यम् । अग्नीषोमीयम्- अग्नीषोमीयम् ।

वास्तोष्पतीयम्- वास्तोष्पत्यम् । गृहमेधीयम्-गृहमेध्यम् ॥

ढक्—अग्निर्देवताऽस्य=आग्नेयम् ॥

ठञ्—महाराजो देवताऽस्य=माहाराजिकम् । प्रौष्ठपदिकम् ॥

पितृ और मातृ शब्दों से यदि उनके भ्राता अभिधेय हों तो क्रम से व्यत् और डुलच् प्रत्यय होतेहैं और यदि उनके पिता अभिधेय हों तो महच् प्रत्यय होता है-पितुर्भ्राता पितृव्यः=चाचा वा ताऊ । मातुर्भ्राता मातुलः=मामा । पितुः पिता पितामहः=बाबा । मातुः पिता मातामहः=नाना ॥

३–सामूहिकाः

षष्ठयन्त शब्द से समूह (समुदाय) के अर्थ में सामूहिक प्रत्यय होते हैं ॥

अण्—काकानां समूहः=काकम् । वाकम् ॥ भिक्षाणां समूहः=भैक्षम् । गर्भिणीनां समूहः=गार्भिणम् । युवतीनां समूहः=यौवनं यौवतं वा ॥

वुञ्—औपगवानां समूहः=औपगवकम् । उक्ष्णां समूहः=औक्षकम् । औष्ट्रकम् । औरभ्रकम् । राजकम् । राजन्यकम् । राजपुत्रकम् । वात्सकम् । मानुष्यकम् । आजकम् । वार्द्धकम् । काठकम् । कालापकम् इत्यादि 'वु' को 'अक' आदेश होजाता है ॥

यञ्- वुञ्- ठञ्—केदाराणां समूहः=कैदार्यम्, कैदारकम्, कैदारिकम् ॥

यञ् - गणिकानां समूहः=गाणिक्यम् ॥

यत्—ब्राह्मणानां समूहः=ब्राह्मण्यम् । माणव्यम् । वाडव्यम् ॥

टञ्—कवचिनां समूहः=कावचिकम् ॥

ठक्—हस्तीनां समूहः=हास्तिकम् । धैनुकम् । आपूपिकम् । शाष्कुलिकम् ॥

तल्—ग्रामाणां समूहः=ग्रामता । जनता । बन्धुता । सहायता । गजता ॥

अञ्—कपोतानां समूहः=कापोतम् । मायूरम् । तैत्तिरम्

यञ्- ठक्—केशानां समूहः=केश्यम्- कैशिकम् ॥

छ- अण्—अश्वानां समूहः=अश्वीयम् । आश्वम् ॥

४—अध्ययनार्थकाः

द्वितीयान्त शब्द से पढ़ने और जानने के अर्थ में अध्ययनार्थक प्रत्यय होते हैं ।

अण्—व्याकरणमधीते, वेद वा=वैयाकरणः=जो व्याकरण पढ़ता है वा जानता है उसको वैयाकरण कहते हैं ऐसेही--नैरुक्तः । छान्दसः । इत्यादि

ठक्—यज्ञविशेषवाचक और उक्थादि गणपठित शब्दों से अध्ययनार्थक ठक् प्रत्यय होताहै । यज्ञवाचक-अग्निष्टोममधीते, वेदवा=आग्निष्टोमिकः । वाजपेयिकः ।

उक्थादि—उक्थान्यधीते, वेद वा=औक्थिकः । नैयायिकः । लौकायतिकः । नैमित्तिकः । याज्ञिकः । धार्मिकः । वार्त्तिकः । इत्यादि

विद्या, लक्षण और कल्प ये शब्द जिनके अन्त में हों, उनसे तथा इतिहास और पुराण शब्दों से भी

उक्तार्थ में 'ठक्' होता है—नक्षत्रविद्यामधीते, वेद वा=नाक्षत्रविद्यिकः । सार्पविद्यिकः । आश्वलक्षणिकः । मातृकल्पिकः । ऐतिहासिकः । पौराणिकः ।

वसन्तादि गणपठित शब्दों से भी उक्तार्थ में 'ठक्' होता है—वसन्तविद्यामधीते, वेद वा=वासन्तिकः । ग्रैष्मिकः । वार्षिकः । शारदिकः । हैमन्तिकः । शैशिरिकः । प्राथमिकः । गौणिकः । आथर्वणिकः ॥

वुन्—क्रमादि गणपठित शब्दों से उक्तार्थ में 'वुन्' होताहै--क्रममधीते, वेद वा=क्रमकः । पदकः । शिक्षकः । मीमांसकः । सामकः । इत्यादि

लुक्—प्रोक्त प्रत्ययान्त शब्दोंसे अध्ययनार्थक प्रत्यय का लोप होजाताहै । पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयं तदधीते तद्वेद वा=पाणिनीयः । आपिशलः ।

५—शैषिकाः

जिन अपत्यादि अर्थों में अबतक प्रत्यय कहे जा चुके हैं, उनसे जो शेष जातादि अर्थ हैं, उनको शैषिक कहते हैं । शैषिक प्रत्यय जिन २ अर्थों में कहे जावेंगे, उन सब अर्थों में समष्टि रूप से जो प्रत्यय होते हैं प्रथम उनको दिखलाते हैं ॥

शैषिक प्रत्यय अनेक विभक्तियोंसे और अनेक अर्थों में होतेहैं, यथा—स्रुघ्नादागतः, स्रुघ्नेजातः, स्रुघ्नः निवासोऽस्य=स्रौघ्नः=स्रुघ्न से आया, स्रुघ्न में उत्पन्न हुवा, स्रुघ्न जिसका निवासस्थान है, ये सब स्रौघ्न कहलावेंगे ॥

य- खञ्—ग्राम शब्द से जातादि अर्थों में शैषिक य और खञ् प्रत्यय होतेहैं--ग्रामे जातः, ग्रामः निवासोऽस्य वा=ग्राम्यः । ग्रामीणः ॥

ढक्—नद्यादि गणपठित शब्दों से शैषिक (ढक्) प्रत्यय होताहै – नद्यां जातं नादेयं जलम्। मह्यां जातं माहेयं जतु । वानेयं काष्ठम् ॥

त्यक्—दक्षिणा, पश्चात् और पुरस् शब्दोंसे शैषिक (त्यक्) प्रत्यय होता है- दक्षिणस्यां जातः दाक्षिणात्यः । पाश्चात्यः । पौरस्त्यः ॥

यत् – दिव्, प्राच्, अपाच्, प्रत्यच् और उदच् शब्दोंसे शैषिक (यत्) प्रत्यय होता है- दिवि जातं=दिव्यम् । प्राच्यम् । अपाच्यम् । प्रतीच्यम् उदीच्यम् ॥

त्यप् – अमा, इह, क्व, तसन्त और त्रान्त अव्ययों से शैषिक 'त्यप्' प्रत्यय होताहै– अमा = सह जातः = अमात्यः । * इह जातः = इहत्यः। क्वत्यः । इतस्त्यः । तत्रत्यः । अत्रत्यः । (नि) अव्यय से ध्रुवार्थ में (त्यप्) होता है- नित्यं=ध्रुवम् ॥

छ – जिसके आदि अच् की वृद्धि हुईहो. उसे शैषिक (छ) प्रत्यय होताहै--शालायां भवः=शालीयः | मालीयः ।

तद्, यद्, एतद्, युष्मद् और अस्मद् इन सर्वनामों से भी शैषिक (छ) प्रत्यय होताहै-तस्मिन् भवः=तदीयः । एतदीयः । युष्मदीयः–त्वदीयः । अस्मदीयः- मदीयः ।।

अण्- खञ् - छ—युष्मद् और अस्मद् सर्वनामों से

* राजा का सहचर होने से अमात्य मन्त्री को कहते हैं।

(छ) के अतिरिक्त अण् और खञ् प्रत्यय भी होते हैं, परन्तु इन दोनोंमें दोनोंको क्रमसे युष्माक और अस्माक आदेश होजाते हैं, केवल (छ) में ये अपने स्वरूप से रहते हैं- युष्मासु- भवः=यौष्माकः, यौष्माकीणः; युष्मदीयः । अस्मासु—भवः=आस्माकः, आस्माकीनः, अस्मदीयः । एकवचन में तवक और ममक आदेश भी होतेहैं तावकः - तावकीनः । मामकः—मामकीनः ॥

ठक्—छस्—भवत् सर्वनाम से ठक् और छस् प्रत्यय होते हैं—भवत्सु-भवः = भावत्कः-भवदीयः ॥

यत्—अर्द्ध शब्द से (यत्) प्रत्यय होता है-अर्द्धे-भवम् = अर्द्ध्यम् ॥

म - आदि, मध्य, अवस् और अधस् शब्दों से 'म' प्रत्यय होताहै - आदौ भवः = आदिमः। मध्यमः । अवमः । अधमः । अवस् और अधस् के सकार का लोप होजाता है ॥

वुञ्—नगर शब्दसे निन्दा और प्रवीणता में शैषिक (वुञ्) होताहै - नगरे - भवः=नागरकश्चौरः । नागरकः शिल्पी । अन्यत्र- नागरो ब्राह्मणः । अण् होगा ॥

छ—पर्वत शब्द से मनुष्य अभिधेय हो तौ शैषिक (छ) प्रत्यय होता है- पर्वते - भवः=पर्वतीयः पुरुषः । पर्वतीयो राजा । मनुष्य से भिन्न में अण् भी होताहै । पर्वतीयं पार्वतं वा फलम् ॥

यत् - द्वीप शब्द से यदि वह समुद्र के समीप हो तौ शैषिक (यत्) होता है - द्वीपे भवं द्वैप्यम् ॥

ठञ् - कालविशेष वाचक शब्दों से शैषिक (ठञ्) होताहै- अह्नि कृतम्=आह्निकम्। मासिकम्। वार्षिकम्।

शरद् शब्द से यदि श्राद्ध अभिधेय हो तो 'ठञ्' होता है अन्यत्र अण् - शरदि भवं शारदिकं श्राद्धम्। अन्यत्र - शारदं नभः॥

ठञ्-अण् - रोग और आतप अभिधेय हों तो शरद् शब्द से ठञ् और अण् दोनों होते हैं - शारदिकः शारदो रोगः। शारदिकः शारद आतपः। निशा और प्रदोष शब्दों से भी ठञ् और अण् दोनों होते हैं— निशायांभवं=नैशिकं, नैशं वा तमः। प्रादोषिकं, प्रादोषम्

अण् - ऋतु और नक्षत्र वाचक शब्दों से शैषिक (अण्) होता है। ऋतु - ग्रीष्मे भवं=ग्रैष्मम्। शैशिरम्। इत्यादि॥ नक्षत्र - तैषम्। पौषम्। इ०॥

एण्य-ठक् - प्रावृष् से एण्य और वर्षा से (ठक्) होता है - प्रावृषि भवः=प्रावृषेण्यः। वर्षासु भवः=वार्षिकः

तनस् - सायम्, चिरम् आदि अव्ययों से तनस् प्रत्यय होता है - सायं भवः=सायन्तनः। चिरन्तनः॥

इम् - अग्र, पश्चात् और अन्त शब्दों से शैषिक (इम्) प्रत्यय होताहै - अग्रे भवम्=अग्रिमम्। पश्चिमम्। अन्तिमम्। पश्चात् को (पश्च) आदेश भी होजाता है॥

अब एक २ विभक्ति से एक २ अर्थ में जो शैषिक प्रत्यय होते हैं उनको व्यष्टि रूप से दिखलाते हैं: -

१—जातार्थकाः

जातार्थ से लेकर भवार्थ पर्यन्त सब प्रत्यय सप्तम्यन्त से होते हैं।

अण्—स्रुघ्ने जातः=स्रौघ्नः । माथुरः । पाञ्चालः । सैन्धवः । रौहिणः । मार्गशीर्षः ।

ठप्—प्रावृषि जातः=प्रावृषिकः ।

वुन्—पथि जातः=पन्थकः । पथिन्‌को पन्थ आदेश होजाता है । पूर्वाह्णे जातः=पूर्वाह्णकः । अपराह्णकः । आर्द्रकः । मूलकः । प्रदोषकः ।

अण्-यत्-वुञ्—अमावास्यायां जातः=आमावास्यः, अमावास्यः, अमावास्यकः ।

ढञ्—कोशे जातं कौशेयं वस्त्रम् ॥

(२) उप्तार्थकाः

अण्—हैमन्ते उप्ताः हैमन्ता=यवाः । ग्रैष्माः = व्रीहयः ।

वुञ्—ग्रीष्मे उप्तानि ग्रैष्मकाणि = सस्यानि । वासन्तिका = मुद्गाः ।

(३) देयार्थकाः

ठञ्—मासे देयं=मासिकम् ऋणम् । वार्षिकम् ।

ठञ्-वुञ्—संवत्सरे देयं=सांवत्सरिकम्, सांवत्सरकम् । आग्रहायणिकम्, आग्रहायणकम् ।

(४) भवार्थकाः

अण्—स्रुघ्ने भवं=स्रौघ्नम् । माथुरम् ।

यत्—दिगादि गणपठित शब्दों से भवार्थ में 'यत्' प्रत्यय होता है । दिशि भवं दिश्यम् । वर्ग्यम् । गव्यम् । मेध्यम् । पथ्यम् । रहस्यम् । साक्ष्यम् । आद्यम् । अन्त्यम् । मुख्यम् । जघन्यम् । यूथ्यम् । न्याय्यम् । वंश्यम् । आप्यम् ॥ इत्यादि । शरीरावयव वाचक शब्दों

से भी भवार्थ में 'यत्' होता है—दन्तेभवं दन्त्यम्। कर्ण्यम्। कण्ठ्यम्। ओष्ठ्यम्। तालव्यम्। मूर्द्धन्यम्॥

ढञ्—दृतौ भवं=दार्तेयम्। कौलेयम्। आहेयम्। वास्तेयम्। आस्तेयम्।

अण्—ढञ्-ग्रीवायां भवं=ग्रैवं, ग्रैवेयम्।

ञ्य—गम्भीरे भवं गाम्भीर्यम्। बाह्यम्। दैव्यम्। पाञ्चजन्यम्॥

ठञ्—अन्तर्वेश्मनि-भवम्=आन्तर्वेश्मिकम्। आन्तर्गेहिकम्। आध्यात्मिकम्। आधिदैविकम्। आधिभौतिकम्। और्ध्वदैहिकम्। ऐहलौकिकम्। पारलौकिकम्

छ—जिह्वामूले- भवं=जिह्वामूलीयम्। अंगुलीयम्। वर्गान्त अक्षर समूहवाचक शब्द से भी 'छ' प्रत्यय होता है- कवर्गीयम्। चवर्गीयम्॥

ख—यत्--वर्गान्त शब्द अक्षरसमूह से भिन्न किसी और समुदायका वाचक हो तो ख और यत् प्रत्यय होते हैं- ब्राह्मणवर्गीणः, ब्राह्मणवर्ग्यः॥

(५) व्याख्यानार्थकाः

षष्ठ्यन्त व्याख्यातव्य से व्याख्यान के अर्थ में व्याख्यानार्थक प्रत्यय होते हैं॥

अण्—सुपां व्याख्यानः=सौपः। तैङः। कार्त्तः। ऋगयनानां व्याख्यानः=आर्गयनः। पौनरुक्तः। नैगमः। वास्तुविद्यः। नैमित्तः। औपनिषदः। शैक्षः। इत्यादि

अण्—यत्--छन्दसां व्याख्यानः=छान्दस, छन्दस्यः॥

ठक्—इष्टीनां व्याख्यानः=ऐष्टिकः। चातुर्होतृकः।

ब्राह्मणिकः । आर्चिकः । प्राथमिकः । आध्वरिकः । पौरश्चरणिकः । नामिकः । आख्यातिकः ॥

ठञ् - अग्निष्टोमस्य व्याख्यानः=आग्निष्टोमिकः । वाजपेयिकः । इत्यादि

(६) आगतार्थकाः

पञ्चम्यन्त शब्द से आने के अर्थ में आगतार्थक प्रत्यय होते हैं ॥

अण् - स्रुघ्नादागतः=स्रौघ्नः । माथुरः । वाङ्गः । कालिङ्गः । शुण्डिकादागतः=शौण्डिकः । कार्पणः । स्थाण्डिलः । तैर्थः । इत्यादि

ठक्—आकरादागतम् आकरिकं सुवर्णम् । आपणिकं वस्त्रम् ॥

वुञ् - विद्या और योनि सम्बन्ध वाचक शब्दों से 'वुञ्' होता है। विद्यासम्बन्ध - उपाध्यायादागतः = औपाध्यायकः । आचार्यकः । योनिसम्बन्ध - पितामहादागतः=पैतामहकः । मातामहकः ॥ इत्यादि

ठञ् - विद्या और योनि सम्बंध वाचक ऋकारान्त शब्दोंसे ठञ् होता है । विद्या - होतुरागतं=हौतृकम् । पौतृकम् । योनि - भ्रातृकम् । मातृकम् ॥

ठञ् - यत्--पितुरागतं=पैतृकं पित्र्यं वा ॥

(७) प्रभवार्थकाः

पञ्चम्यन्त शब्दसे उत्पन्न होने के अर्थ में प्रभवार्थक प्रत्यय होते हैं ।

अण् - हिमवतः प्रभवति=हैमवती गङ्गा । समुद्रात् प्रभवति सामुद्रं रत्नम् ॥

अद्—विदूरात्प्रभवति=वैदूर्यो मणिः ॥

(८) प्रोक्तार्थकाः

तृतीयान्त शब्द से कहने के अर्थ में प्रोक्तार्थक प्रत्यय होते हैं।

अण्—ऋषिणा प्रोक्तम्-आर्षम्। मनुना प्रोक्तं=मानवम्। पातञ्जलम्॥

छ—पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम्। तैत्तिरीयम्। पौरुषेयम्॥

(९) कृतार्थकाः

तृतीयान्त शब्द से करने के अर्थ में कृतार्थक प्रत्यय होते हैं—

ठञ्—कायेन कृतं=कायिकम्। वाचिकम्। मानसिकम्

अण्—मक्षिकाभिः कृतं=माक्षिकं मधु।

वुञ्—कुलालेन कृतः=कौलालको घटः। कार्मारकः। नैषादकः।

(१०) इदमर्थकाः

षष्ठ्यन्त से प्रथमा के अर्थ में इदमर्थक प्रत्यय होते हैं-

यत्-रथस्येदं=रथ्यं चक्रं युगं वा=रथ्य चक्र वा युग को कहते हैं।

अञ्—वाहन वाचक तथा अध्वर्यु और परिषद् शब्दोंसे इदमर्थ में 'अञ्' होताहै - अश्वस्येदम्=आश्वम्। औष्ट्रम्। हास्तिनम्। आध्वर्यवम्। पारिषदम्॥

ठक्—हलस्येदं हालिकम्। सैरिकम्।

वुञ्—गोत्र वाचक और चरण वाचक शब्दों से इदमर्थ में 'वुञ्' होता है। गोत्र - उपगोरिदम्=औपग-

वकम् ॥ चरण—कठस्येदं = काठकम् ॥

ञ्य - छन्दोगानामिदं = छान्दोग्यम् । औक्थिक्यम् । याज्ञिक्यम् । बाह्वृच्यम् । नाट्यम् ॥

अण् - आथर्वणिक शब्द से उक्तार्थ में 'अण्' और उसके अन्त्य 'इक्' का लोप होता है - आथर्वणिकस्यायम् = आथर्वणः ॥

(६) विकारावयवार्थकाः

अब यहां से विकार और अवयव अर्थमें जो प्रत्यय होते हैं, उनका विधान करेंगे, परन्तु यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि प्राणी, ओषधि और वृक्ष वाचक शब्दों से तो उक्त दोनों अर्थों में प्रत्यय होते हैं और इनसे भिन्न द्रव्यों के वाचक शब्दों से केवल विकारार्थ में प्रत्यय होते हैं ॥

अण् - ओषधेरवयवो विकारो वा = औषधम् । आश्वत्थः । मृत्तिकाया विकारः मार्त्तिकः । अश्मनो विकार आश्मः । प्रत्ययके योगसे अश्मन् शब्दके नकार का लोप होजाता है । आश्मनः ॥ बिल्वस्य विकारोऽवयवो वा=बैल्वः । व्रैहयः । मौद्गः । गौधूमः । ऐक्षवः । वैणवः । कार्पासः । इत्यादि त्रपुणो विकारः = त्रापुषम् । जातुषम् त्रपु और जतु शब्दों को 'षुक्' का आगम भी होताहै ॥

अण् - अञ् - पलाशस्य विकारोऽवयवो वा=पालाशम् । खादिरम् । शैंशपम् । कारीरम् । शैरीषम् । इत्यादि । रूप दोनों के एक से ही होते हैं, केवल स्वर में कुछ भेद होता है ॥

अञ् – उकारान्त प्राणिवाचक और रजत आदि शब्दों से उक्त दोनों अर्थों में 'अञ्' होता है –

उकारान्त – दारोर्विकारः=दारवम् ॥ प्राणिवाचक-कपोतस्यावयवो विकारो वा = कापोतम् । मायूरम् । तैत्तिरम् । रतादि--राजतम् । सैसम् । लौहम् । औदुम्बरम् ।

ष्लञ् – शम्या अवयवो विकारो वा=शामीलम् ॥

मयट् – भक्ष्य और आच्छादन वाचक शब्दों को छोड़कर सब शब्दों से उक्त दोनों अर्थों में 'मयट्' प्रत्यय होताहै – अश्मनो विकार आश्ममयम् । बिल्व-मयम् । त्रपुमयम् । पलाशमयम् । इत्यादि । भक्ष्य और आच्छादन में नहीं होता = मौद्गः सूपः । कार्पासमाच्छादनम् ॥

वृद्धि, युक्त शरादि और एकाच् शब्दों से नित्यही 'मयट्' होता है – वृद्धियुक्त– आम्रमयम् । शालमयम् । शाकमयम् । शरादि – शरमयम् । दर्भमयम् । मृन्मयम् । तृणमयम् । एकाच्--त्वङ्मयम् । वाङ्मयम् ॥ इत्यादि

'गो' शब्द से पुरीष अभिधेय हो तो 'मयट्' अन्यत्र 'यत्' प्रत्यय होता है – गोर्विकारोऽवयवो वा=गोमयं पुरीषम् । पुरीषसे अन्यत्र--गव्यं घृतम् ।

व्रीहि शब्द से पुरोडाश अभिधेय हो तो 'मयट्' होता है – व्रीहीणां विकारः = व्रीहिमयः पुरोडाशः । अन्यत्र– व्रैहम् । अण् होगा ॥

तिल और यव शब्दों से संज्ञा से अन्यत्र 'मयट्'

होता है – तिलमयं पात्रम् । यवमयं क्षेत्रम् । संज्ञा में तिल से 'अण्' और यव से 'कन्' होकर--तिलस्य विकारः तैलम् । यवस्य विकारः = यावकः । बनेंगे ॥

वुञ् – उष्ट्रस्यावयवो विकारोवा = औष्ट्रकः ।

वुञ्-अण् – उमाया विकारः औमकम्, औमम् । और्णकम् ,और्णम् ॥

ढञ् – एण्या अवयवो विकारोवा = ऐणेयं मांसम् । पुंलिङ्ग एण् शब्द से अण् होकर – ऐणम् । होगा ।

यत् – गो, पयस् और द्रु शब्दों से 'यत्' प्रत्यय होता है – गव्यम् । पयस्यम् । द्रव्यम् ॥

लुक् – फल अभिधेय हो तो विकारावयवार्थक प्रत्यय का लोप होजाता है – आमलक्याः फलम् आमलकम् । आम्रम् । बदरम् । नारिकेलम् ॥ हरीतकी । कोशातकी = द्राक्षा ॥

जिनके फल पककर सूख जाते हैं, उनसे भी प्रकृत प्रत्यय का लोप होजाता है – व्रीहीणां फलानि = व्रीहयः । यवाः । मुद्गाः । माषाः । तिलाः ॥ पुष्प और मूल अभिधेय हों तो भी कहीं २ पर प्रत्यय का लोप होजाता है—मल्लिकायाः पुष्पं मल्लिका । जातिः । कदम्बम् । अशोकम् । विदार्याः मूलं विदारी । अंशुमती । बृहती ॥ इत्यादि

(७) अनेकार्थकाः

अब जो भिन्न २ विभक्तियों से भिन्न २ अर्थों में प्रत्यय होते हैं उनको दिखलाते हैं –

प्रथमान्ताद्.

ठक्—प्रथमान्त से षष्ठी के अर्थ में प्रत्यय होतेहैं। सुवर्णं पण्यमस्य = सौवर्णिकः। वास्त्रिकः। लावणिकः। मृदङ्गं शिल्पमस्य = मार्दङ्गिकः। पाणविकः॥ असिः प्रहरणमस्य = आसिकः। धानुष्कः॥ अस्तीति मतमस्य = आस्तिकः। नास्तिकः। दैष्टिकः॥

ईकक्—शक्तिः प्रहरणमस्य = शाक्तीकः। याष्टीकः॥

ठञ्—तपः प्राप्तोऽस्य = तापसिकं कर्म। कालिकं वैरम्॥

अण्—ऋतुः प्राप्तोऽस्य = आर्त्तवं पुष्पम्॥

यत्—कालः प्राप्तोऽस्य = काल्यस्तापः। काल्यं शीतम्॥

छ—अनुप्रवचनं प्रयोजनमस्य = अनुप्रवचनीयम्। उत्थापनीयम्। प्रवेशनीयम्। आरम्भणीयम्। आरोहणीयम्। छन्दः समापनीयम्॥

यत्—स्वर्गः प्रयोजनमस्य = स्वर्ग्यम्। यशस्यम्। आयुष्यम्। काम्यम्। धन्यम्॥

इतच्—तारकाः सञ्जाता अस्य = तारकितं नभः। पुष्पितो वृक्षः। पल्लविता लता॥

कन्—द्वे परिमाणमस्य = द्विकम्। त्रिकम्। पञ्चकम्। अष्टकम्॥

वतु—यत्परिमाणमस्य = यावान् = जितना। तावान् = उतना। एतावान् = इतना। किं परिमाणमस्य = कियान्* = कितना। इदं परिमाणमस्य = इयान्* = इतना। 'किम्' सर्वनाम से संख्या के परि-

*किम् और इदम् सर्वनामसे परे वतु के वकार को घकार होकर 'घ, को इय्' होजाता है॥

र्थ में 'इति' प्रत्यय भी होता है। का संख्या परिमाण-मेषां छात्राणाम् = कति छात्राः । कियन्तश्छात्राः ॥

तयप् – पञ्चावयवा अस्य=पञ्चतयम् । दशतयम् । चतुष्टयम् । द्वितयम् । त्रितयम् ॥

अयच् – द्वावयवावस्य=द्वयम् । त्रयम् । उभयम् ॥

द्वितीयान्तात्.

ठक् – समाजं रक्षति=सामाजिकः ॥ शब्दं करोति शाब्दिकः । प्रतीपं वर्त्तते प्रातीपिकः । अन्वीपं वर्तते आन्वीपिकः । प्रातिलोमिकः । आनुलोमिकः । प्रातिकूलिकः । आनुकूलिकः । *पक्षिणो हन्ति=पाक्षिकः । मात्स्यिकः । मैनिकः । मार्गिकः ॥ धर्मं चरति धार्मिकः । समुदायान् समवैति=सामुदायिकः । सामवायिकः । सामूहिकः । सामाजिकः । छेदमर्हति छैदिकः । भैदिकः ॥ हल वहति =हालिकः । सैरिकः ॥

ण्य – परिषदं समवैति=पारिषद्यः ।

ण्य – ठक्--सेनां समवैति = सैन्यः, सैनिकः ॥

यत् – रथं वहति = रथ्यम् । युग्यम् । शीर्षच्छेद-मर्हति शीर्षच्छेद्यः ॥

य--दण्डमर्हति=दण्ड्यः । कश्यः । मेध्यः । अर्घ्यः।वध्यः ॥

यत् – ढक्—धुरं वहति = धुर्यः, धौरेयः ॥

अण्—शकटं वहति=शाकटः ॥

---

* ईप् और कूल शब्द प्रति के योग में प्रतिकूल और अनु के योग में अनुकूल अर्थ के वाचक हैं ॥

यत्—घ--पात्रमर्हति=पात्र्यः, पात्रियः। दक्षिणामर्हति=दक्षिण्यः, दक्षिणीयः॥

घ—यज्ञमर्हति=यज्ञियो ब्राह्मणः देशो वा॥

खञ्—ऋत्विजमर्हति=आर्त्विजीनो यजमानः॥

ठञ्-संशयं प्राप्तः=सांशयिकः। योजनं गच्छति=यौजनिकः॥

ण-ष्कन्--पन्थानं गच्छति=पान्थः, पथिकः।

तृतीयान्तात्

ठक्-अक्षैर्दीव्यति=आक्षिकः॥ कुद्दालेन खनति=कौद्दालिकः॥ दध्ना संस्कृतं दाधिकम्॥ दण्डेन चरति=दाण्डिकः॥ उडुपेन तरति=औडुपिकः॥ वेतनेन जीवति=वैतनिकः। धानुष्कः। औपस्थानिकः॥ ओजसा वर्तते औजसिकः शूरः। साहसिकश्चौरः। आम्भसिको मत्स्यः॥ अह्ना निर्वृत्तं, लभ्यं, कार्यं वा आह्निकम्। मासिकम्॥

ठन्—नावा तरति=नाविकः। प्लविकः। घटिकः। बाहुकः। वस्नेन जीवति वस्निकः। क्रयिकः। विक्रयिकः॥

यत्—नावा तार्यं नाव्यम्॥ वयसा तुल्यम्=वयस्यम्=धर्मेण प्राप्यं धर्म्यम्॥ विषेण वध्य विष्यम्। मूलेन समं मूल्यम्॥ सीतया समितं सीत्यम्॥ तुलया सम्मितं तुल्यम्॥

यत्—अण्--उरसा निर्मितः=उरस्यः, औरसः पुत्रः॥

कन्—षष्टिरात्रेण पच्यन्ते षष्टिका धान्यविशेषाः। प्रत्यय के योग से रात्र शब्द का लोप होजाता है॥

चतुर्थ्यन्तात्.

यत्—दद्भ्यो हितं दन्त्यम्। नस्यम्। कण्ठ्यम्। शीर्षण्यम्। * खल्यम्। यव्यम्। माष्यम्। तिल्यम्। वृष्यम्। ब्रह्मण्यम्॥

ख--आत्मने हितम् आत्मनीनम्। अश्वनीनम्। विश्वजनीनम्। पंचजनीनम्॥

ख—ठञ्--सर्वजनेभ्यो हितं सर्वजनीनम्-सार्वजनिकम्॥ ठञ्-महाजनाय हितं माहाजनिकम्। सन्तापाय प्रभवति = सान्तापिकः। सांग्रामिकः। सांपरायिकः। नैसर्गिकः

ण—ख—सर्वेभ्यो हितं सार्वम्-सर्वीयम्॥

ढञ्—पुरुषाय हितं पौरुषेयम्॥ ✝

खञ्—माणवाय हितं माणवीनम्। चारकीणम्॥

यत्—ठञ्—योगाय प्रभवति=योग्यः, यौगिकः॥

उकञ्—कर्मणे प्रभवति=कार्मुकं धनुः॥ ♠

पंचम्यन्तात्.

यत्- धर्मादनपेतं धर्म्यम्। पथ्यम्। अर्थ्यम्। न्याय्यम्

षष्ठ्यन्तात्.

यत्—हृदयस्य प्रियः=हृद्यः॥ प्रत्यय के योग से हृदय को 'हृत्' आदेश होजाता है॥

अण्-अञ्--सर्वभूमेरीश्वरः सार्वभौमः। पृथिव्या

---

* प्रत्यय के योग से शिरस् शब्दको शीर्षन् आदेश होजाता है

✝ पुरुष शब्द से वध, समूह, विकार और कृत अर्थ में ढञ्. प्रत्यय होता है यह वृत्तिकार का मत है-पौरुषेयो वधः स हो विकारो ग्रन्थो वा॥

♠ केवल धनुषके ही अभिधान में यह प्रत्यय होता है॥

ईश्वरः=पार्थिवः ॥ तथा - सर्वभूमेरुत्पातः=सार्वभौमः । पृथिव्या उत्पातः=पार्थिवः ॥

त्यकन् - उप और अधि उपसर्गों से यथाक्रम आसन्न और आरूढ़ अर्थ में (त्यकन्) प्रत्यय होता है - पर्वतस्यासन्नम् = उपत्यका । पर्वतस्यारूढ़म् = अधित्यका ॥ पर्वत कि अधोभागीय स्थल को उपत्यका और ऊर्ध्वभागीय स्थल को अधित्यका कहते हैं ॥

डट् - एकादशानां पूरणः = एकादशः = ग्यारहवां । द्वादशः = बारहवां ॥

मट् - पञ्चानां पूरणः = पञ्चमः । सप्तमः । अष्टमः । नवमः । दशमः ॥

थट् - षण्णां पूरणः षष्ठः । चतुर्थः । कतिथः ॥

तिथट् - बहूनां पूरणः = बहुतिथः । पूगतिथः । गणतिथः । संघतिथः ॥

इथट् - यावतां पूरणः = यावतिथः । तावतिथः । एतावतिथः ॥

तीय - द्वयोः पूरणः = द्वितीयः । त्रयाणां पूरणः= तृतीयः ॥ त्रि के (र्) को (ऋ) सम्प्रसारण हुआ है ॥

छ - यत् - चतुर्णां पूरणः = तुरीयः, तुर्यः ॥ आद्यक्षर का लोप होता है ॥

डट्--तमट् - विंशतेः पूरणः = विंशः = विंशतितमः । एकविंशः - एकविंशतितमः ॥ २० से लेकर ९९ तक ये दोनों प्रत्यय होते हैं । शत १०० और उससे ऊपर फिर केवल (तमट्) ही होता है—शततमः । सहस्रतमः । लक्षतमः ॥ षष्टि ६० सप्तति ७० अशीति ८० और

नवति ९० शब्दों से भी केवल (तमट्) ही होता है - षष्टितमः । सप्ततितमः । अशीतितमः । नवतितमः ॥

सप्तम्यन्तात्.

ठक् - आकरे नियुक्तः आकरिकः । आपणिकः । दौवारिकः ॥ निकटे वसति नैकटिकः । आवसथिकः ॥

ठञ् - देवागारे नियुक्तः = देवागारिकः । कोष्ठागारिकः ।

ठञ् - गुडे साधुः गौडिक इक्षुः । साक्तुको यवः ॥ लोके विदितः = लौकिकः । सार्वलौकिकः ॥

यत्—सामसु साधुः सामन्यः । कर्मण्यः । शरण्यः ॥ समानतीर्थे वसति = सतीर्थ्यः । समानोदरे वसति सोदर्यः । समान शब्द को 'स' आदेश होता है । सतीर्थ्य सहाध्यायी और सोदर्य सगे भाई को कहते हैं ॥

खञ्—प्रतिजने साधुः प्रातिजनीनः । सांयुगीनः । सार्वजनीनः ॥

ण-ण्य—परिषदि साधुः = पारिषदः, पारिषद्यः ॥

ढञ्—पथि साधुः = पाथेयम् । आतिथेयम् । वासतेयम् । स्वापतेयम् ।

य-सभायां साधुः = सभ्यः । वेदमें ढञ्भीहोताहै-सभेयः ॥

अण्-अञ्—सर्वभूमौ विदितः = सार्वभौमः । पृथिव्यां विदितः पार्थिवः ॥

८—मतुबर्थकाः

भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने । सम्बन्धेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः ॥ बाहुल्य, निन्दा,

प्रशंसा, नित्ययोग, अत्युक्ति, सम्बन्ध और होने के अर्थ में मतुप् आदि प्रत्यय होतेहैं-बाहुल्य-धनवान्। निन्दा-वाचालः। प्रशंसा-गुणवान्। नित्ययोग-लोमशः। अत्युक्ति-अनुदरी। सम्बन्ध-दण्डी। छत्री। सत्ता-अस्तिमान्॥

प्रथमान्त शब्द से षष्ठी और सप्तमीके अर्थ में मतु-वर्थीय प्रत्यय होते हैं॥

मतुप्—गावो यस्य सन्ति स गोमान् देवदत्तः। वृक्षा यस्मिन् सन्ति स वृक्षवान् पर्वतः। यवा यस्मिन् सन्ति तद्यवमत् क्षेत्रम्। शीलं यस्याः यस्यां वा अस्ति सा शीलवती कन्या॥ रसोऽस्मिन्नस्ति रसवानिक्षुः। *

रूपवान्। गन्धवान्। स्पर्शवान्। शब्दवान्। स्नेह-वान्। गुणवान्। विद्युत्वान्। उदन्वान्॥

लच्-मतुप्—चूडा अस्मिन्नस्ति=चूडालः,चूडावान्। सिध्मलः,सिध्मवान्। मांसलः,मांसवान्। शीललः,शील-वान्। श्यामलः,श्यामवान्। पिंगलः,पिंगवान्। पृथुलः, पृथुमान्। मृदुलः,मृदुमान्। मंजुलः,मंजुमान्॥

लच्—वत्स और अंस शब्दों से क्रमशः इच्छा और बल के अभिधान में 'लच्' होता है—वत्सलः=कामुकः। अंसलः=बलवान्॥

---

* यवादि शब्दोंको छोड़कर मकारान्त, अकारान्त,मकारोपध और अकारोपध शब्दोंसे परे मतुप्के मकार को वकार आदेश होजाताहै। मकारान्त—किंवान्। शंवान्। अकारान्त-ज्ञानवान्। विद्यावान्॥ मकारोपध—लक्ष्मीवान्। शमीवान्॥ अकारोपध-यशस्वान्, भास्वान्॥ इत्यादि

लच्-इलच्-मतुप्—फेना अस्मिन् सन्ति=फेनलः, फेनिलः, फेनवान् ॥

श-मतुप्—लोमानि अस्यसन्ति = लोमशः,लोमवान् । रोमशः,रोमवान् ॥

न-मतुप्—पामा अस्यास्ति=पामनः, पामवान् । वामनः,वामवान् । ऊष्मणः,ऊष्मवान् ॥

इलच्-मतुप्—पिच्छिलः,पिच्छवान् । उरसिलः, उरस्वान् । पङ्किलः,पङ्कवान् ॥

ण-मतुप्—प्रज्ञाऽस्याऽस्मिन् वा अस्ति=प्राज्ञः,प्रज्ञावान् । श्राद्धः,श्रद्धावान् । आर्चः,अर्चावान् । वार्त्तः,वृत्तिमान् ॥

विन्-अण्—तपोऽस्याऽस्मिन् वा अस्ति=तपस्वी,तापसः

इन्-अण्—सहस्राण्यस्य सन्ति=सहस्री,साहस्रः ॥

अण्—ज्योत्स्ना अस्मिन्नस्ति=ज्यौत्स्नःचन्द्रः पक्षो वा । तामिस्रः पक्षः । तामिस्री रात्रिः । सिकता अस्मिन्नस्ति= सैकतो घटः । शर्करा अस्मिन्नस्ति=शार्करं पयः ॥

इलच्-अण्-मतुप्—सिकता और शर्करा शब्दों से यदि देश अभिधेय हो तो तीनों प्रत्यय होते हैं—सिकता अस्मिन् विद्यते=सिकतिलः,सैकतः,सिकतावान् देशः । शर्करिलः,शार्करः,शर्करावान् देशः ॥

उरच्—दन्त शब्दसे यदि वे बढ़े हुवे हों तो 'उरच्' प्रत्यय होता है—दन्ता उन्नता अस्य सन्ति=दन्तुरः ॥

र—ऊषोऽस्मिन्नस्ति=ऊषरं क्षेत्रम् । सुषिरं काष्ठम् । मुष्करः पशुः । मधुरो गुडः । खरः । मुखरः । कुञ्जरः । नगरम् । पांसुरम् । पाण्डुरम् ॥

न—द्यु रस्मिन्नस्तीति=द्युम आकाशः । द्रुमः वृक्षः ॥

व-इन्·ठन्·मतुप्—केशा अस्य अस्मिन् वा सन्ति=केशवः, केशी, केशिकः, केशवान् ॥

व—गाण्डी और अजग शब्दोंसे संज्ञा में 'व' प्रत्यय होता है—गाण्डीवं धनुः । अजगवं पिनाकः ॥ १

ईरन्—काण्डानि अस्य अस्मिन् वा सन्ति=काण्डीरस्तृणः ग्रन्थो वा ॥

इरच्—अण्डानि अस्य अस्मिन् वा सन्ति=आण्डीरः पक्षी नीडो वा ॥

वलच्—रजोऽस्यां विद्यते=रजस्वला=स्त्री । कृषिरस्यास्तीति=कृषीवलः=कृषकः । दन्ता अस्य सन्ति दन्तावलः हस्ती । शिखावलो मयूरः ॥ २

इन्-ठन्—अकारान्त और व्रीह्यादि शब्दोंसे मतुबर्थीय इन् और ठन् प्रत्यय होते हैं—

अकारान्त—दण्डमस्यास्तीति=दण्डी, दण्डिकः । छत्री, छत्रिकः ॥ व्रीह्यादि—व्रीहयोऽस्य सन्ति व्रीही, व्रीहिकः ॥ मायी, मायिकः । शिखी, शिखिकः ॥

इन्-ठन्-इलच्—तुन्दमस्यास्तीति=तुन्दी, तुन्दिकः, तुन्दिलः । उदरी, उदरिकः, उदरिलः ॥

विन्—यशोऽस्यास्तीति=यशस्वी । पयस्वी । तपस्वी । मायावी । मेधावी । स्रग्वी ॥

युस्—ऊर्णा अस्य विद्यन्ते=ऊर्णायुरविः ॥

---

१ गाण्डीव अर्जुन के और अजगव शिव के धनुष् की संज्ञा है

२ दन्त और शिखा शब्द से 'वलच्, प्रत्यय केवल संज्ञा में होता है।

ग्मिन्—वाचोऽस्य सन्ति=वाग्मी=भाषणपटुः ॥

आलच्-आटच्—कुत्सितं बहुभाषते=वाचालः,वाचाटः ॥१

आमिन् – स्वमैश्वर्यमस्यास्तीति=स्वामी ॥

अच् – अर्शोऽस्यास्तीति=अर्शसः । उरसः । चतुरः

इन्-ज्वरोस्यास्तीति=ज्वरी । व्रणी । कुष्ठी । वातकी । अतीसारकी ॥२ सुखी । दुःखी । द्विजधर्मी । आर्यशीली । ब्राह्मणवर्णी ॥ हस्तोऽस्यास्तीति=हस्ती ॥ ३ हस्त नाम यहां शुण्ड का है और वह हाथ ही का काम करता भी है ॥ वर्णी = ब्रह्मचारी ॥ ४ पुष्करिणी । कुमुदिनी । पद्मिनी । मृणालिनी ॥ ५

इन्-मतुप् – बलमस्यास्तीति=बली-बलवान् । कुली, कुलवान् । उत्साही,उत्साहवान् । आरोही,आरोहवान् ॥

ब-भ-युस्-ति-तु-त-यस् – कम् और शम् अव्ययों से मतुबर्थीय उक्त ७ प्रत्यय होते हैं-कमस्यास्तीति=कम्बः, कम्भः, कंयुः, कन्तिः, कन्तुः,कन्तः,कंयः । शमस्यास्तीति= शम्बः, शम्भः, शंयुः, शन्तिः,शन्तुः,शन्तः,शंयः ॥

युस् – अहम् और शुभम् अव्ययोंसे मतुबर्थमें 'युस्' प्रत्यय होता है-अहमस्यास्तीति=अहंयुः=अहंकारवान् । शुभमस्यास्तीति शुभंयुः = कल्याणवान् ॥

---

१ आलच् और आटच् प्रत्यय निन्दा में होते हैं ॥

२ वात और अतीसार शब्द को प्रत्यय के योग से 'कुक्' का आगम होता है ॥

३ हस्त शब्द से जाति के अभिधान में 'इनि' प्रत्यय होता है ·

४ वर्ण शब्द से ब्रह्मचारी के अभिधान में 'इनि' होताहै ॥

५ पुष्करादि शब्दों से देशके अभिधान में 'इनि' होता है ॥

६—स्वार्थिकाः

अब स्वार्थमें जो प्रत्यय होते हैं उनका निरूपण करते हैं।

तमप्-इष्ठन् – अतिशायन (बढ़े हुवे) के अर्थ में जहां बहुतों में से एक का निर्धारण किया जाय वहां तमप् और इष्ठन् प्रत्यय होते हैं। तमप्-अयमेषामतिशयेनाढ्यः=आढ्यतमः=यह इन सबमें अत्यन्त धनवान् है। दर्शनीयतमः। सुकुमारतमः। इष्ठन्-अयमेषा मतिशयेन पटुः = पटिष्ठः = यह इन सबमें अत्यन्त चतुर है। लघुः, लघिष्ठः = छोटा॥ गुरुः, गरिष्ठः = बड़ा॥

तरप्-ईयसु – अतिशायन में ही जहां दो में से एक का निर्धारण किया जाय वहां तरप् और ईयसु प्रत्यय होते हैं। तरप् – अयमनयोरतिशयेनाढ्यः = आढ्यतरः = यह इन दोनों में अत्यन्त धनवान् है। दर्शनीयतरः। सुकुमारतरः। ईयसु – अयमनयोरतिशयेन पटुः = पटीयान्= यह दोनों में अत्यन्त चतुर है। लघुः,लघीयान्। गुरुः, गरीयान्॥ १

यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि इनमें से इष्ठन् और ईयसु प्रत्यय केवल गुणवाचक शब्दों से होते हैं। द्रव्यवाचक और क्रियावाचकों से तमप् और तरप् प्रत्यय होते हैं। गुणवाचक और द्रव्यवाचकों के उदाहरण दिखलाये जाचुके। क्रियावाचकों से – अतिशयेन पचति = पचतितमाम्,पचतितराम् २ इत्यादि

१ इष्ठन् और ईयसु प्रत्ययों के योग में पूर्व शब्द के अन्त्य अच् का लोप होजाता है॥

२ तिङन्त के योग में तरप् और तमप् प्रत्ययों को आम् का आगम होजाता है॥

प्रशस्य शब्दको इष्ठन् और ईयस् प्रत्ययके योगमें 'श्र' और 'ज्य' आदेश होजाते हैं – अयमेषामतिशयेन प्रशस्यः = श्रेष्ठः, ज्येष्ठः = यह इनसबमें अत्यन्त उत्तमहै। अयमनयो रतिशयेन प्रशस्यः श्रेयान्,ज्यायान्[१] = यह दोनोंमें अत्यन्त उत्तम है।

अन्तिक और बाढ शब्दोंको उक्त दोनों प्रत्ययों के योग में क्रमशः नेद् और साध आदेश होते हैं – अयमेषामतिशयेनान्तिकः = नेदिष्ठः = यह इन सब में अत्यन्त निकट है। अयमनयोरतिशयेनान्तिकः = नेदीयान् = यह इन दोनों में अत्यन्त निकट है॥ अयमेषामतिशयेन बाढः=साधिष्ठः। अयमनयोरतिशयेन बाढः=साधीयान्

युव और अल्प शब्दों को उक्त दोनों प्रत्ययों के योगमें पाक्षिक 'कन्' आदेश होताहै – अयमेषामतिशयेन युवा=कनिष्ठः,यविष्ठः। अयमनयोरतिशयेन युवा = कनीयान्-यवीयान्॥ ऐसेही=कनिष्ठः,अल्पिष्ठः। कनीयान्,अल्पीयान्॥

विन् और मतुप् प्रत्ययों का उक्त दोनों प्रत्ययोंके योगमें लोप होजाता है – अयमेषामतिशयेन स्रग्वी = स्रजिष्ठः,स्रजीयान्॥ अयमेषामतिशयेन त्वग्वान् = त्वचिष्ठः,त्वचीयान्॥

स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र और क्षुद्र इन शब्दों को उक्त दोनों प्रत्ययों के योगमें बीच के यण् अर्थात् य्, व्, र्, ल्, का लोप और पूर्व को गुण होकर –

१ 'ज्य' को ईयस् के योग में आकारादेश होजाता है॥

अयमेषामतिशयेनस्थूलः = स्थविष्ठः । स्थवीयान् ॥ दविष्ठः । दवीयान् ॥ यविष्ठः । यवीयान् ॥ ह्रसिष्ठः । ह्रसीयान् ॥ क्षेपिष्ठः। क्षेपीयान् ॥ क्षोदिष्ठः। क्षोदीयान्

इन्हीं दोनों प्रत्ययों के योग में प्रिय को प्र, स्थिर को स्थ, स्फिरको स्फ, ऊरुको वर्, बहुलको बंहि,गुरु को गर्, वृद्ध को वर्षि, तृप्र को त्रप्, दीर्घ को द्राघि और वृन्दारक को वृन्द् आदेश होजाते हैं—अयमेषामतिशयेन प्रियः = प्रेष्ठः । प्रेयान् ॥ स्थेष्ठः । स्थेयान् ॥ स्फेष्ठः । स्फेयान् ॥ वरिष्ठः । वरीयान् ॥ बंहिष्ठः । बंहीयान् ॥ गरिष्ठः । गरीयान् ॥ वर्षिष्ठः । वर्षीयान् ॥ त्रपिष्ठः । त्रपीयान् ॥द्राघिष्ठः । द्राघीयान् ॥वृन्दिष्ठः। वृन्दीयान्

'बहु' शब्द को उक्त दोनों प्रत्ययों के योग में 'भू' आदेश होकर-अयमेषामतिशयेन बहुः = भूयिष्ठः,भूयान्

डतरच्-डतमच् — किम्, यद् और तद् शब्दोंसे जहां दो में से एक का निर्धारण हो वहां डतरच् और जहां बहुतों में से एक का निर्धारण हो वहां डतमच् प्रत्यय होता है — भवतोः कठः कतरः = तुम दोनों में से कठ कौनसाहै ? यतरो भवतोर्देवदत्तः ततर आगच्छतु = तुम दोनोंमेंसे जौनसा देवदत्तहै वह आवै। कतमो भवतां कठः = तुम सबमें से कठ कौनसाहै ? यतमो भवतां यज्ञदत्तस्तम आगच्छतु = तुम सब में से जौनसा यज्ञदत्त हो वह आवै॥

छ — जाति और स्थान शब्द जिसके अन्त में हों ऐसे पद से 'छ' प्रत्यय होता है, यदि जातिमान् और स्था-

नवान् अभिधेय हों तो – ब्राह्मणजातीयो ब्रह्मदत्तः = ब्रह्मदत्त ब्राह्मण जातिवाला है ॥ पितृस्थानीयः सोमदत्तः = सोमदत्त पिता का स्थानापन्न है ॥

कृत्वस् – संख्या शब्दों से क्रिया की अभ्यावृत्ति [गणना]में 'कृत्वस्' प्रत्यय होताहै – पञ्चकृत्वोऽधीते = पांचवार पढ़ता है ॥

सुच् – द्वि, त्रि और चतुर् शब्दों से उक्तार्थ में 'सुच्' प्रत्यय होता है – द्विर्भुङ्क्ते = दोवार खाता है । त्रिर्वा चतुरधीते = तीन वा चार वार पढ़ताहै ॥ 'एक' शब्दको 'सकृत' आदेश होताहै – सकृद्भुङ्क्ते = एकवारखाताहै

धा-कृत्वस् – बहुधाऽधीते । बहुकृत्वोऽधीते = बहुत वार पढ़ता है ॥

मयट् – बहुतायत से प्रस्तुत होने के अर्थ में मयट् होता है – अन्नं बाहुल्येन प्रस्तुतम् = अन्नमयम् = अन्न बहुतायत से प्रस्तुत है । लवणमयम् ॥

कन् – निन्दा, संज्ञा, अल्प और ह्रस्व अर्थ के द्योतन करनेमें कन् प्रत्यय होताहै । निन्दा – कुत्सितोऽश्वः= अश्वकः = बुराघोड़ा ॥ संज्ञा – वंशकः । वेणुकः ॥ अल्प-अल्पं तैलं तैलकन् । लवणकन् ॥ ह्रस्व – ह्रस्वो वृक्षो वृक्षकः । वत्सकः । शावकः । बालकः ॥

तरप् – वत्स, उक्ष, अश्व और ऋषभ शब्दों से युवा अर्थ में 'तरप्' प्रत्यय होताहै – युवा वत्सः वत्सतरः = जवान बछड़ा ॥ उक्षतरः । अश्वतरः । ऋषभतरः ॥

ञ्य – अनन्त, आवसथ, इतिह और भेषज शब्दों से

स्वार्थ में 'ष्यञ्' प्रत्यय होता है – अनन्तएव आनन्त्यम् । आवसथ्यम् । ऐतिह्यम् । भैषज्यम् ॥

यत्—चतुर्थ्यन्त देवता,पाद और अर्घ शब्दों से तादर्थ्य में 'यत्' प्रत्यय होता है। अग्निदेवतायै इदम् = अग्निदेवत्यम् । पितृदेवत्यम् । पद्भ्यामिदं पाद्यम् । अर्घायेदम् अर्घ्यम् ॥

ञ्य – चतुर्थ्यन्त अतिथि शब्द से तादर्थ्य में 'ञ्य' प्रत्यय होता है । अतिथये इदम् = आतिथ्यम् ॥

धेयस् – भागएव भागधेयम् । रूपधेयम् । नामधेयम् ॥

तल् – देव शब्द से स्वार्थ में 'तल्' प्रत्यय होता है – देव एव देवता ॥

कन् – पुत्र शब्द से कृत्रिम और स्नात शब्द से वेदसमाप्ति अभिधेय हो तो स्वार्थ में 'कन्' होता है पुत्र एव पुत्रकः = कृत्रिमः । स्नातकः = ब्रह्मचारी ॥

ठक् – संदेश में वर्तमान वाक् शब्द से स्वार्थ में 'ठक्' प्रत्यय होता है – वाचिकं कथयति = संदेशको कहता है

अण् – निम्नलिखित शब्दों से स्वार्थ में 'अण्' प्रत्यय होता है – प्रज्ञएव प्राज्ञः । मन एव मानसः । चौरः । मारुतः । कौशुः । सात्वतः । दाशार्हः । वायसः । आसुरः । राक्षसः । पैशाचः । दैवतः । बान्धवः । औषधः ।

तिकन् – मृद् शब्द से स्वार्थ में 'तिकन्' प्रत्यय होता है – मृदेव = मृत्तिका । प्रशंसा में मृद् शब्द से स और स्न प्रत्यय होते हैं-प्रशस्ता मृद् = मृत्सा,मृत्स्ना।

शस् – बहु और अल्प शब्द तथा इनके पर्याय वाचक

शब्दों से कारकों के प्रयोगमें एवं संख्या और एकवचन से वीप्सा (द्विर्वचन) में शस् प्रत्यय होताहै - बहूनि, बहुभिः, बहुभ्यः; बहुषु वा ददाति = बहुशो ददाति। अल्पशः। भूरिशः। स्तोकशः॥ द्वौ द्वौ ददाति = द्विशः। त्रिशः। पञ्चशः॥ कणंकणं ददाति = कणशः। क्रमशः॥

तस् - कर्मप्रवचनीय प्रति के योग में जो पञ्चमी विधान की गई है। तदन्त से स्वार्थ में 'तस्' प्रत्यय होताहै - प्रद्युम्नः कृष्णतः प्रति = प्रद्युम्न कृष्ण की ओर से प्रतिनिधि है। तिलान् यच्छ माषतः प्रति = उड़दों के बदले में तिलों को दे॥

आद्यादि शब्दों से अधिकरण कारक में तस् प्रत्यय होता है - आदितः = आदि में। मध्यतः = मध्य में। अन्ततः = अन्त में। पृष्ठतः। पार्श्वतः॥

करण कारकमें भी कहींर पर 'तस्' प्रत्यय होताहै-स्वरेण स्वरतः। वर्णेन = वर्णतः॥ दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह = दुष्ट शब्द जो स्वरसे और वर्णसे मिथ्या प्रयोग किया गया है॥ वह उस अर्थ को नहीं कहता, जिसके लिये प्रयुक्त हुवाहै। वृत्तेन=वृत्ततः। वित्तेन=वित्ततः। अक्षीणो वित्ततःक्षीणो वृत्ततस्तु हतो-हतः = जो धन से हीनहै वह हीन नहीं पर जो चरित्रसे गया वह गया॥

हा और रुह् धातुकी क्रिया को छोड़कर अपादान कारक में भी (तस्) होता है - गृहतो गच्छति = घर से जाता है। ग्रामत आगच्छति = गांवसे आताहै॥

स्वर्गाद्धीयते = स्वर्गसे भ्रष्ट होता है। पर्वतादवरोहति = पर्वत से उतरता है। यहां न होगा॥

जहां किसी पक्ष का आश्रय लिया गया हो वहां षष्ठ्यन्त से भी (तल्) प्रत्यय होता है—भीष्मद्रोणशल्याः कौरवतोऽभवन् = भीष्म द्रोण शल्य कौरवों की ओर हुवे। कृष्णः पाण्डवतोऽभवत् = कृष्ण पाण्डवों की ओर हुवा॥

च्वि—अभूततद्भाव (न होकर होने के) अर्थ में कृ, भू और अस्ति धातुओं का योग होने पर (च्वि) प्रत्यय होताहै। मलिनं वस्त्रं शुक्लीकरोति रजकः=धोबी मलिन वस्त्रको सफेद करता है। वर्षासु मलिनीभवति जलम् = वर्षा ऋतु में जल मलिन होता है॥

साति—जिस दशा में (च्वि) प्रत्यय कहा गया है, उसी दशा में (साति) प्रत्यय भी होता है यदि क्रिया के फल में सम्पूर्णता वा अधीनता विवक्षित हो। सम्पूर्णता—अग्निसात् भवति लोहम् = लोहा सम्पूर्ण अग्निके समान होजाता है। जलसात् भवति लवणम् = सारा लवण जलके समान होजाताहै। भस्मसात् भवतीन्धनम् = इन्धन समस्त भस्म के समान होजाता है॥

अधीनता—राजसात् भवति प्रजाधनम्। प्रजा का धन राजा का होताहै। आत्मसात् कुरुते राजा विद्रोहिणां सर्वस्वम्=राजाबागियों के सर्वस्व को अपना कर लेता है

डाच्—जहां अव्यक्त का अनुकरणहो वहां कृ आदि के योग में 'डाच्' प्रत्यय होता है—पटपटा करोति =

पटत् इस शब्द का अनुकरण करता है । इसके सिवाय अन्य अर्थों में भी 'डाच्' होता है-समयाकरोति = समय को यापन करता है । सुखाकरोति मित्रम् = मित्र को सुख देताहै । दुःखाकरोति शत्रुम् = शत्रुको दुःख देताहै॥

इति सामान्याख्यस्तद्धितः

२–अथ भाववाचकस्तद्धितः

अब भाववाचक तद्धित प्रत्ययोंका निरूपण कियाजाताहै षष्ठ्यन्त शब्द से भावार्थ में भाववाचक प्रत्यय होते हैं ।

त्व-तल्—अश्वस्य भावः=अश्वत्वम्,अश्वता । वृक्षत्वम्, वृक्षता ॥ इत्यादि *

भावाधिकार में त्व और तल् प्रत्यय सबही शब्दों से होते हैं, इसलिये अब आगे इनको छोड़ कर और जो प्रत्यय होते हैं उनको दिखलाते हैं ।

नञ्-स्नञ्—स्त्रिया भावः=स्त्रैणम् । पुंसो भावः=पौंस्नम्

इमन्-अण्—पृथोर्भावः=प्रथिमा, पार्थवम् । म्रदिमा, मार्दवम् । पटिमा,पाटवम् । तनिमा, तानवम् । लघिमा, लाघवम् । गरिमा, गौरवम् । अणिमा, आणवम् ॥

इमन्-ष्यञ्—शुक्लस्य भावः=शुक्लिमा, शौक्ल्यम् । कृष्णिमा, कार्ष्ण्यम् ॥ दृढस्य भावः=द्रढिमा, दार्ढ्यम् । कृशिमा,कार्श्यम् । लवणिमा,लावण्यम् । मधुरिमा,माधुर्यम्

ष्यञ्—गुणवाचक तथा ब्राह्मणादि शब्दोंसे भाव और कर्म दोनों में 'ष्यञ्' होता है । गुणवाचक-जड़स्य भावः कर्मवा=जाड्यम् । मौढ्यम् । चातुर्यम् । पाण्डित्यम् ।

* भाववाचक प्रत्ययों में तल् और इमन् प्रत्ययोंको छोड़कर शेष सब नपुंसकलिङ्ग होतेहैं । तलन्त स्त्रीलिङ्ग और इमनन्त पुंल्लिङ्ग होते हैं ॥

सौख्यम् । सौजन्यम् ॥ ब्राह्मणादि—ब्राह्मणस्य भावः कर्मवा=ब्राह्मण्यम् । माणव्यम् । ऐश्वर्यम् । कौशल्यम् । चापल्यम् । नैपुण्यम् । पैशुन्यम् । बालिश्यम् । आलस्यम् । राज्यम् । आधिपत्यम् । दायाद्यम् । वैषम्यम् ॥

किन्हीं २ शब्दों से स्वार्थ में भी 'ष्यञ्' होता है। चत्वारो वर्णाश्चातुर्वर्ण्यम् । चातुराश्रम्यम् । त्रैस्वर्यम् । षाड्गुण्यम् । सैन्यम् । सामीप्यम् । औपम्यम् । त्रैलोक्यम्

यत्—स्तेनस्य भावः कर्मवा=स्तेयम् । प्रत्यय के योग से नकार का लोप होजाता है ॥

य—सख्युर्भावः कर्मवा=सख्यम् । दूत्यम् ॥

ढक्—कपेर्भावः कर्मवा=कापेयम् । ज्ञातेयम् ॥

यक्—पत्यन्त और पुरोहित आदि शब्दों से भाव औरकर्म में यक् प्रत्यय होताहै । पत्यन्त—सेनापतेर्भावः कर्मवा=सैनापत्यम् । गार्हपत्यम् । प्राजापत्यम् ॥ पुरोहितादि—पुरोहितस्य भावः कर्मवा=पौरोहित्यम् । राज्यम् । बाल्यम् । मान्द्यम् । धार्मिक्यम् । आधिक्यम् । सारथ्यम् । आस्तिक्यम् । नास्तिक्यम् ॥

अञ्—प्राणभृज्जातिवाचक, वयोवाचक और उद्गात्र आदि शब्दोंसे उक्त दोनों अर्थों में 'अञ्' प्रत्यय होता है । प्राणभृज्जातिवाचक—मनुष्यस्य भावः कर्मवा=मानुषम् । आश्वम् । औष्ट्रम् । सैंहम् ॥ वयोवाचक—कुमारस्य भावः कर्मवा=कौमारम् । कैशोरम् ॥ उद्गात्रादि—उद्गातुर्भावः कर्मवा=औद्गात्रम् । आग्नेत्रम् । हौत्रम् । पौत्रम् । सौष्ठवम् । आध्वर्यवम् ॥

अण्—हायनान्त और युव आदि शब्दों से तथा इकारान्त और उकारान्त शब्दों से भी उक्त दोनों अर्थों

में अण् होता है। हायनान्त—द्विहायनोर्भावः कर्म वा=द्वैहायनम्। त्रैहायनम्॥ युवादि—यूनो भावः कर्मवा=यौवनम्। स्थाविरम्। पौरुषम्। कौतुकम्। सौहृदयम्। सौहृदम्। दौर्हृदयम्। दौर्हृदम्। कौशलम्। चापलम्। कौतूहलम्। श्रोत्रियस्य भावः कर्मवा=श्रौत्रम्। प्रत्ययके योगसे यकारका लोप होजाताहै॥ इकारान्त--शुचेर्भावः कर्मवा = शौचम्। मुनेर्भावः कर्मवा=मौनम्। उकारान्त-पटोर्भावः कर्मवा=पाटवम्। लाघवम्। गौरवम्॥

छ- ऋत्विग्विशेषवाचक शब्दों से उक्त दोनों अर्थों में 'छ' प्रत्यय होता है। होतुर्भावः कर्म वा=होत्रीयम्। पोत्रीयम्। आग्नीध्रम्। परन्तु ऋत्विग्विशेष 'ब्रह्मन्' शब्दसे भाव और कर्म में 'त्व' प्रत्यय होता है। ब्रह्मणो भावः कर्मवा=ब्रह्मत्वम्॥ इति भावाख्यस्तद्धितः

३—अथाव्ययसंज्ञकस्तद्धितः

अब अव्यय संज्ञक तद्धित प्रत्ययोंका (जिनके योग से प्रातिपदिक भी अव्यय होजातेहैं)निरूपण किया जाता है

तसिल्—सर्वनामों से पञ्चमी के अर्थ में तसिल् प्रत्यय होता है। कस्मात्=कुतः। * यस्मात्=यतः। तस्मात्=ततः। अस्मात्=अतः। * सर्वस्मात्=सर्वतः। उभाभ्याम्=उभयतः॥ परि और अभि उपसर्गों से भी 'तसिल्' होता है—परितः। अभितः॥

त्रल्—सप्तमी के अर्थ में सर्वनामों से 'त्रल्' प्रत्यय होताहै। कस्मिन्=कुत्र। * यस्मिन्=यत्र। तस्मिन्=तत्र अस्मिन्=अत्र। * सर्वस्मिन्=सर्वत्र। अन्यस्मिन्=अन्यत्र॥

* 'किम्' शब्द को 'कु' और 'इदम्' शब्द को 'अ' आदेश होताहै

ह– 'इदम्' शब्द को सप्तमी के अर्थ में 'ह'प्रत्यय और 'इ' आदेश भी होता है—अस्मिन् = इह ॥

अत-ह – 'किम्' शब्द को सप्तमी के अर्थ में अत् और ह प्रत्यय तथा क्व और कु आदेश भी होते हैं – कस्मिन्=क्व, कुह ॥

दा – सर्व, एक, अन्य, किम्, यद् और तद् सर्वनामों से काल की विवक्षा में 'दा' प्रत्यय होता है-सर्वस्मिन् काले=सर्वदा,सदा=सबकालमें। एकस्मिन् काले=एकदा= एककाल में । अन्यस्मिन् काले=अन्यदा = अन्यकाल में कस्मिन् काले = कदा = कब । यस्मिन् काले = यदा = जब । तस्मिन् काले = तदा = तब ॥

र्हिल्-धुना-दानीम्—सप्तम्यन्त'इदम्' शब्द से काल की विवक्षा में उक्त तीनों प्रत्यय होते हैं। इन तीनों के योगमें 'इदम्' शब्द को क्रमसे एत, अ और इ आदेश होते हैं--अस्मिन्काले=एतर्हि, अधुना,इदानीम्=अब ॥

दा-दानीम्—सप्तम्यन्त 'तद्' शब्दसे कालकी विवक्षा में उक्त दोनों प्रत्यय होते हैं – तस्मिन् काले=तदा, तदानीम् = तब ॥

द्य—वर्त्तमानकाल वा दिन अभिधेय हो तो (समान) को'स'और (इदम्) को अ आदेश होकर इनसे 'द्य' प्रत्यय होता है। समानेऽहनि = सद्यः=आजका दिन। अस्मिन्नहनि = अद्य = आज ॥

उत्-आरि—पूर्व और पूर्वतर वत्सर अभिधेय हों तो इन दोनों को पर आदेश और यथाक्रम उत् और आरि प्रत्यय होते हैं। पूर्वस्मिन् वत्सरे = परुत् = पहिले वर्ष में। पूर्वतरस्मिन् वत्सरे=परारि = उससे पहिले वर्षमें ॥

समण् – वर्त्तमान संवत्सर अभिधेय हो तो 'इदम्' को 'इ' आदेश और 'समण्' प्रत्यय होता है। अस्मिन् संवत्सरे = ऐषमः = इस वर्ष में ॥

एद्युस् – पूर्व, उत्तर, अधर, अपर, इतर, अन्य, अन्यतर और उभय शब्दोंसे दिवस् अभिधेय हो तो 'एद्युस्'प्रत्यय होता है । पूर्वस्मिन्नहनि = पूर्वेद्युः = पहिले दिन में । उत्तरेद्युः = पिछले दिन में । अधरेद्युः = नीचे के दिन में । अपरेद्युः, इतरेद्युः, अन्येद्युः = और दिन में । अन्यतरेद्युः=औरसे और दिन में । उभयेद्युः=दोनों दिनमें।

एद्यवि – पर शब्द से दिवसाभिधान में होता है । परस्मिन्नहनि = परेद्यवि = परले दिन में ॥

थाल् – सर्वनाम शब्दोंसे प्रकारकी विवक्षा में 'थाल्' प्रत्यय होताहै । तेनप्रकारेण=तथा=तैसे । येनप्रकारेण= यथा=जैसे । सर्वप्रकारेण = सर्वथा = सब प्रकार से। अन्य प्रकारेण = अन्यथा = अन्यप्रकार से ॥

थम् – इदम् और किम् सर्वनामों को प्रकार की विवक्षा में क्रमसे इत् और क आदेश होकर 'थम्'प्रत्यय होता है । अनेन प्रकारेण = इत्थम् = इस प्रकार । केन प्रकारेण = कथम् = किस प्रकार ॥

अस्-अस्तात्—पूर्व, अधर, और अवर इन दिक्, देश और कालवाचक शब्दों को सप्तमी, पञ्चमी और प्रथमा विभक्ति के अर्थ में पुर्, अध् और अव् आदेश होकर अस् और अस्तात् प्रत्यय होतेहैं ।

सप्तमी – पूर्वस्यां दिशि वसति = पुरः-पुरस्तात् वा वसति = पूर्व दिशामें रहताहै। पञ्चमी – पूर्वस्माद् शा-दागतः = पुरः पुरस्ताद्वाऽऽगतः = पूर्व देश से आया।

प्रथमा – पूर्वो रमणीयः = पुरःपुरस्ताद्वा रमणीयः=पूर्व काल रमणीय था । इसीप्रकार—अधः,अधस्तात् और अवः, अवस्तात् । को भी समझो ॥

अतस् – उक्त विशेषणविशिष्ट दक्षिण और उत्तर शब्दोंसे उक्त तीनों अर्थों में 'अतस्' प्रत्यय होताहै । दक्षिणस्यां,दक्षिणस्याः,दक्षिणावादिक्=दक्षिणतः । उत्तरतः ॥

अतस्-अस्तात् – उक्तार्थमें ही पर और अवर शब्दोंसे ये दोनों प्रत्ययहोतेहैं। परतः-परस्तात् । अवरतः,अवरस्तात्

रि-रिष्टात् – ऊर्ध्व शब्द को उक्तार्थ में 'उप' आदेश और उक्त दोनों प्रत्यय होतेहैं । उपरि,उपरिष्टात् ॥

आत्—अपर शब्द को 'पश्च' आदेश और 'आत्' प्रत्यय होता है—पश्चात् ॥

आत्-एनप् – उत्तर, अधर और दक्षिण शब्दों से उक्तार्थ में आत् और एनप् प्रत्यय होते हैं । उत्तरात्, उत्तरेण । अधरात्-अधरेण । दक्षिणात्,दक्षिणेन ॥

धा-संख्यावाचक शब्दों से प्रकार अर्थ में 'धा' प्रत्यय होताहै । पञ्चधा । बहुधा ॥ इत्यादि

धा-ध्यमुञ् – एक शब्दसे प्रकार अर्थमें दोनों प्रत्यय होते हैं-एकधा,ऐकध्यम् ॥

धा-धमुञ्-एधाच्—द्वि और त्रि शब्दोंसे प्रकार अर्थमें तीनों प्रत्यय होते हैं। द्विधा, द्वैधम्, द्वेधा । त्रिधा,त्रैधम, त्रेधा ॥

इत्यव्ययाख्यस्तद्धितः

समाप्तञ्च तद्धितप्रकरणम्

सम्पूर्णश्चायं चतुर्थोभागः

शुद्ध शिलाजीत

पर्वत का शिलाजीत प्रसिद्ध है, परन्तु बहुतसे प्रतारक नक़ली को असली कहकर बेच देतेहैं। सस्ता मिलने के कारण प्रायः लोग उनकी वञ्चना में आजाते हैं। हमारे शिलाजीत की उत्तमता का इससे अधिक और क्या प्रमाण होसकता है कि इसको एकबार भी जिन्होंने सेवन किया वे सदा के लिए इसके चमत्कारिक गुणोंपर मोहित होगए। यही कारण है कि भारतवर्ष के समस्त प्रान्तों में इसका इतना अधिक प्रचार हुवाहै कि जिसके लिए हमको एक कार्यालय स्थापन करनेकी आवश्यकता हुई। सब प्रकार के प्रमेह, धातुदौर्बल्य, मन्दाग्नि और अर्श आदि रोगों के लिए यह अमोघ औषध है। उक्त रोगों से सताये हुए कुछ दिन इसका सेवन करें ईश्वरने चाहा तो फिर उनको किसी अन्य औषधिकी आवश्यकता न रहेगी स्वस्थ पुरुष भी (जिनको कोई रोग न हो) यदि इसका सेवन करेंगे तो उनका आमाशय इतना बलिष्ठ होजायगा कि जो खायेंगे उसको पचा सकेंगे। भूख खुलकर लगेगी। शरीर में बल और मनमें उत्साह उत्पन्न होगा। और कोई रोग सहसा उनपर आक्रमण न कर सकेगा। स्वास्थ्यके अभिलाषुकों को एकबार इसके गुणोंकी परीक्षा अवश्य करनी चाहिए। दाम फी तोला २) हमारे यहां से अन्य सब प्रकार की औषधियां भी मिल सकती हैं, सूची मंगाकर देखें।

मिलने का पताः—

अम्बिकादत्त पन्त

हिमालयन औषधालय रानीखेत U. P.

उपनिषदों का सरल भाषानुवाद.

संस्कृत के प्राचीन साहित्य में उपनिषदों का जैसा मान व गौरव है, वह किसी से छिपा नहीं है। अपनी वस्तु का तो सभी आदर करते हैं, किन्तु इनकी पवित्र शिक्षा के आगे अन्य धर्मावलम्बी और विदेशीय लोगों ने भी अपना माथा झुकाया है। राजपुत्र दाराशिकोह का व्याकुल आत्मा इसी अमृत रस को पान करके शान्त हुआ था। जर्मनी के फिलास्फर शोपिनहार इन्हीं की प्रशंसा में लिख गए हैं कि "मेरे जीवन के अनन्य सुख का कारण यही उपनिषद् विद्या है और मैं विश्वास रखता हूं कि मरने के पश्चात् भी मेरे आत्मा को सुख और शान्ति इन्हीं से मिलेगी।" यद्यपि उपनिषदों के हिन्दीभाषा में भी कई अनुवाद होचुके हैं, तथापि किसी ऐसे अनुवाद की (जो सरल और संक्षिप्त रीतिपर मूल के आशय को व्यक्त करता हो, तथा भाषा उसकी जटिल और दुर्बोध न हो और मूल्य भी स्वल्प हो) बड़ी भारी आवश्यकता थी। यह अनुवाद इन सब गुणों से अलंकृत है। मूल्य ईश -) केन -)॥ कठ ।) प्रश्न ।) मुण्डक ≡) माण्डूक्य =)॥ छहों १))

अबलासन्ताप.

कोई देश वा समाज सौभाग्यशाली नहीं होसकता, जब तक उसकी स्त्रियों की दशा सन्तोषजनक न हो। स्त्रीजाति का उद्धार जिन उपायों पर अवलम्बित है और उनके प्रति पुरुषों का जो देश, काल और धर्मानुसार कर्तव्य है, बस उसीका निदर्शन बड़ी उत्तमता से इस पुस्तक में किया गया है। स्त्री पुरुष दोनों के लिए यह पुस्तक उपयोगी है। मूल्य ≡)

इकट्ठा लेने वालों को कमीशन भी दिया जाता है.

मिलने का पताः—बद्रीदत्त शर्म्मा

आर्यसमाज ठंढीसड़क—कानपुर U.P.

was
obser
gastr
n aga
urog

J., H
. Wie

that removal of the antrum with the abolishment of production of gastrin may contribute to post-gastrectomy atrophic gastritis by cutting out the trophic effect of gastrin upon the renewal of the parietal and peptic cells.

binding type, were uniformly absent from the serum; and in none of the 35 cases studied for serum complement there was a lowering of its level below the normal range.

Thus, the immunological status of patients with atrophic gastritis after sub-total gastrectomy differs from that seen in other forms of atrophic gastritis, including pernicious anemia. This suggests a non-immunological mechanism in the pathogenesis of the atrophic gastritis in the operated stomach. It is suggested that removal of the antrum with the abolishment of production of gastrin may contribute to post-gastrectomy atrophic gastritis by cutting out the trophic effect of gastrin upon the renewal of the parietal and peptic cells.